458

सुरुचि प्रकाशन

(17)

शारदा पुस्तकालय
(संजीवनी शा. द. केंद्र)
क्रमांक ~~2411K~~ 458

(458)

धारा ३७० – पृथकतावादी विष

भारतीय संविधान की धारा ३७० जम्मू-कश्मीर राज्य को देश के शेष स राज्यों से अलग करती है और वहीं उसको एक भिन्न धरातल पर खड़ा कर दे है। उसका विश्लेषण करते हुए प्रसिद्ध न्यायविद दुर्गादास बसु ने कहा है कि घात धारा को संविधान में किसी विवशता या अनिवार्यता अथवा कानूनी आवश्यक के कारण नहीं, अपितु केवल राजनीतिक तुष्टीकरण के लिए जोड़ा गया था

डॉ. अम्बेडकर का इन्कार

जब तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने भारतीय संविधान के प्रध शिल्पी डॉ. अम्बेडकर से इसकी चर्चा की थी, तो उन्होंने इसका विरोध करते कहा था कि यह धारा देश के लिए घातक सिद्ध होगी, क्योंकि उसके कारण ज कश्मीर राज्य भारत के साथ एकरस होने के स्थान पर विपरीत दिशा में अल अलगाव का मार्ग पकड़ेगा और देश के दूसरे राज्यों को भी गलत प्रेरणाएँ देग पंडित नेहरू ने शेख अब्दुल्ला को डॉ. अंबेडकर के पास इस धारा की आवश्यव पर चर्चा करने के लिए भेजा था। डॉ. अंबेडकर ने शेख की सब बातें सुनने पश्चात् उसको यह कहकर वापस कर दिया था कि "तुम चाहते हो कि भारत कश्मीर की रक्षा इत्यादि की सारी जिम्मेदारी तो रहे, पर भारतीय संसद् का उस कोई अधिकार न हो। मैं भारत का विधि-मंत्री हूँ, मुझे भारत के हितों की रक्षा क है, इसलिए तुम्हारे प्रस्ताव को स्वीकार नहीं कर सकता।"

संविधान-सभा में भी भारी विरोध

इस इन्कार के पश्चात् पंडित नेहरू ने धारा ३७० का प्रस्ताव रियासती रा मंत्री गोपाल स्वामी आयंगर द्वारा संविधान-सभा में रखवाया था। सभा में इर बहुत विरोध हुआ। विरोध करने वालों में एक मुस्लिम सदस्य श्री हसरत मोह का नाम उल्लेखनीय है। उनकी आपत्ति थी कि इस धारा के द्वारा जम्मू-कश

के साथ पक्षपात क्यों किया जा रहा है ? पंडित नेहरू के निजी हस्तक्षेप और आयंगर के यह आश्वासन देने के पश्चात् कि यह धारा अस्थायी है और शीघ्र ही समाप्त कर दी जायेगी तथा भारतीय संविधान व संसद् का निर्णय शेष भारत के समान जम्मू-कश्मीर पर भी लागू हुआ करेगा, संविधान-सभा ने उसे बड़ी झिझक के साथ स्वीकार किया था ।

धारा ३७० के दुष्परिणाम

१. इस धारा के बने रहने के कारण, भारतीय संविधान की धारा १ और ३७० के अतिरिक्त कोई भी धारा जम्मू-कश्मीर राज्य पर सीधे लागू नहीं होती । शेष धाराओं को तथा संसद् द्वारा पारित कानूनों को वहाँ लागू करने के लिए भारत के राष्ट्रपति की विशेष अनुज्ञा तो चाहिए ही, वहाँ की विधान-सभा की विशेष सहमति भी चाहिए ।

२. इस अनुबंध का राज्य की सामान्य जनता पर और विशेषकर घाटी की मुस्लिम जनता पर यह मनोवैज्ञानिक प्रभाव हुआ कि वे अपने को देश के शेष नागरिकों से अलग मानने लगे । उनमें राष्ट्रीय एकात्मता के स्थान पर क्षेत्रीयता व साम्प्रदायिकता के आधार पर पृथक्ता की भावनाएँ भड़कीं । उनमें यह धारणा जगी कि जम्मू-कश्मीर राज्य की स्थिति देश में विलीन हुई अन्य पौने छः सौ रियासतों से भिन्न है और जम्मू-कश्मीर के तत्कालीन महाराजा हरिसिंह द्वारा विलय-पत्र पर हस्ताक्षर करने के पश्चात् भी राज्य का भारत में पूर्ण व अन्तिम रूप से विलय नहीं हुआ है । घाटी में विद्यमान पाक समर्थक तत्त्वों, शेख अब्दुल्ला के अनुयायियों और जमात-ए-इस्लामी के लोगों ने, जो कश्मीर को भारत से अलग करके पाकिस्तान में मिलाने का या स्वतंत्र राज्य बनाने का स्वप्न देखते हैं, धारा ३७० के अभिप्राय को इसी रूप में कश्मीर की भोली-भाली जनता को पिछले ४३ वर्षों में समझाया है । शेख अब्दुल्ला द्वारा स्थापित आल जम्मू-कश्मीर प्लेबिसाइट फ्रंट का दि. ७ अप्रैल १९५८ का प्रस्ताव इस प्रचार का ज्वलन्त उदाहरण है । उसमें कहा गया : "जम्मू-कश्मीर राज्य ने अभी तक दोनों डोमीनियनों (भारत और पाकिस्तान) में से किसी में भी अपना विलय नहीं किया है, इसलिए जम्मू-कश्मीर पर हुए पाकिस्तानी हमले को भारत पर किया गया हमला कहना सचाई नहीं है ।"

३. नेशनल कान्फ्रेंस और कांग्रेस (इं) के नेतागण भी इस धारा के संबंध में जनता के सामने जो बातें कहते आये हैं, वे और भी दुर्भाग्यपूर्ण हैं। वे जम्मू-कश्मीर के २/५ भाग पर पाकिस्तान के कब्जे का उल्लेख कर यह जताते हैं कि इसके रहते यह नहीं कहा जा सकता है कि कश्मीर संबंधी भारत-पाक विवाद समाप्त हो गया है और इसीलिए यह कहना भी यथार्थ नहीं होगा कि राज्य का भारत में अन्तिम रूप में वास्तविक विलय हो चुका है। ऐसी स्थिति में यदि धारा ३७० को हटा दिया गया तो पाकिस्तान को भारत के विरुद्ध प्रचार करने का खुला अवसर मिल जायेगा कि भारत अपना संविधान व शासन कश्मीरी जनता पर जबरदस्ती लाद रहा है। इस तर्क का और कुछ परिणाम हो न हो, कश्मीरी जनता के मन में राज्य के विलय के बारे में अनिश्चितता तो निर्मित हुई ही, और फिर नाना प्रकार के राष्ट्र-विरोधी विचार पनपने लगे। पाक-समर्थक तत्त्व उनको हवा देते हुए, भारत के विरुद्ध मजहबी घृणा और दुराव का भाव भड़काते आये हैं, जिसका परिणाम यह है कि घाटी के मुसलमानों ने भारत व हिन्दू समाज के विरुद्ध हथियार उठा लिये हैं। पूरी घाटी हिंसा, लूटमार, आगजनी और पृथक्तावाद की भीषण अग्नि में धू-धू कर जल रही है। हिन्दू अपने ही देश हिन्दुस्थान में विदेशी घोषित कर दिया गया है और अमरनाथ, खीरभवानी तथा मटन जैसे अपने तीर्थों को छोड़ देने के लिए विवश किया जा रहा है।

४. इस धारा के कारण भड़का पृथक्तावाद केवल जम्मू-कश्मीर को ही नहीं, अपितु पंजाब, तमिलनाडु, असम व पूर्वोत्तर राज्यों को भी प्रभावित कर रहा है। वहाँ भी भारतीय संसद् और संविधान के प्रभाव से मुक्त होने की आवाजें उठने लगी हैं और भारतीय गणराज्य की एकता व शक्ति को क्षरित कर रही हैं। नागालैंड व मिजोरम राज्य को इस दिशा में कुछ सफलता भी मिल चुकी है।

५. भारतीय संविधान की अनेक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण धाराएँ व व्यवस्थाएँ इसी धारा ३७० के कारण जम्मू-कश्मीर में आज तक प्रभावी नहीं हो सकीं। उनके कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं :–

(क) भारतीय संविधान देश के सभी नागरिकों के लिए दस मौलिक कर्तव्यों का निर्देश करता है, जिसके अनुसार राष्ट्र-ध्वज, राष्ट्रगान और राष्ट्रीय मानबिन्दुओं का समादर करना अनिवार्य माना गया है। किन्तु धारा ३७०

के कारण यह व्यवस्था अब तक भी जम्मू-कश्मीर में लागू नहीं हो सकी है। उसी का परिणाम है कि राष्ट्र-ध्वज तिरंगे झंडे को जलाना, फाड़ना और अपमानित करना वहाँ दण्डनीय अपराध नहीं है, जैसा कि भारत के शेष राज्यों में है। १९८९ में श्री अटल विहारी वाजपेयी के एक प्रश्न का उत्तर देते हुए तत्कालीन गृह-राज्यमंत्री पी. चिदम्बरम् ने इसकी पुष्टि की थी।

(ख) भारतीय संविधान का अनुच्छेद २५३ अन्तरराष्ट्रीय समझौतों व संधियों को पूरे देश में प्रभावी बनाने हेतु कानून बनाने की शक्ति भारतीय संसद् को प्रदान करता है। उस कानून से यदि किसी राज्य सरकार पर विपरीत प्रभाव पड़ता हो, तो भी वह उस पर आपत्ति नहीं कर सकती—अर्थात् प्रादेशिक हित व अधिकार की अपेक्षा राष्ट्र के हितों को वरीयता देने की व्यवस्था उस अनुच्छेद द्वारा बनायी गयी है। किन्तु संविधान का यह अत्यन्त आवश्यक अनुच्छेद धारा ३७० के कारण जम्मू-कश्मीर पर लागू नहीं किया जा सका है, जिसका तात्पर्य यह है कि ऐसी स्थिति आ सकती है कि जब राष्ट्र के व्यापक हित में की गयी किसी अन्तरराष्ट्रीय संधि को जम्मू-कश्मीर में लागू न किया जा सके।

(ग) भारतीय संविधान ने भारतीय संसद् को यह अधिकार दिया है कि वह राष्ट्र की आवश्यकता को देखते हुए किसी भी राज्य की सीमाओं में परिवर्तन कर सकती है और आवश्यकतानुसार किसी भी राज्य को भारतीय संघ के एक या अनेक राज्यों में मिला सकती है। स्मणीय है कि सन् १९५६ में भारतीय संसद् ने इसी अधिकार से हैदराबाद राज्य को उसके पड़ोसी राज्यों में मिलाया था। किन्तु भारतीय संसद् इसी धारा ३७० के कारण, जम्मू-कश्मीर राज्य को आज तक हाथ नहीं लगा सकी, यद्यपि राज्य की जनता और राष्ट्र-हित दोनों की माँग रही है कि राज्य का पुनर्गठन हो।

(घ) अस्सी के दशक में जम्मू-कश्मीर राज्य द्वारा नियुक्त वजीर कमीशन ने यह अभिमत दिया था कि कश्मीर घाटी और जम्मू क्षेत्र की जनसंख्या के अनुपात को देखते हुए यदि कश्मीर घाटी में विधान-सभा की ४२ सीटें

हैं तो जम्मू क्षेत्र में ३६ सीटें होनी चाहिए, जबकि वहाँ मात्र २६ सीटें हैं। इसी प्रकार उसका कहना था कि लद्दाख की भौगोलिक स्थिति और जलवायु को देखते हुए, वहाँ दो सीटों का प्रावधान बहुत कम है, उसको बढ़ाना चाहिए। किन्तु इसी धारा ३७० के कारण चुनाव आयोग वजीर कमीशन की उस सिफारिश को क्रियान्वित नहीं कर सका और न ही भारत सरकार उस संबंध में कुछ कर पा रही है। वहाँ के राजनीतिक नेतृत्व की पक्षपाती व साम्प्रदायिक नीतियों के विरुद्ध जम्मू व लद्दाख की गुहार सुनने वाला कोई नहीं है।

६. राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त राज्यपाल जम्मू-कश्मीर का सांविधानिक मुखिया होने के बाद भी जम्मू-कश्मीर की नागरिकता न रखने और वहाँ मतदान के अधिकार से वंचित रहने के कारण बाहरी व्यक्ति समझा जाता है। इसका लाभ उठाते हुए घाटी में पाक-एजेण्ट भोले-भाले लोगों को समझाने में सफल हो जाते हैं कि राज्यपाल एक बाहरी व्यक्ति है, इसलिए उसका शासन हमारी गुलामी का सूचक है।

७. जम्मू-कश्मीर राज्य की प्रशासनिक व लोकतंत्री व्यवस्था में इसी प्रकार की एक और दुर्भाग्यपूर्ण विसंगति १९४७ से चली आ रही है, उसको भी इसी धारा ३७० के कारण आज तक सुधारा नहीं जा सका है। देश-विभाजन के पश्चात् करोड़ों भारतीय पाकिस्तान कहे जाने वाले क्षेत्र को छोड़कर, बचे भारत के किसी भी राज्य में जाकर बसे। उन्हें वहाँ के पुराने रहने वालों के समान सभी नागरिक अधिकार व सुविधाएँ दी गयीं। मनपसंद कामकाज करने से लेकर अचल सम्पत्ति खरीदने व बनाने, नौकरी करने, बच्चों को उपयोगी शिक्षा दिलाने तथा देश की लोकतंत्री प्रक्रिया में अर्थात् चुनाव में भाग लेने आदि के पूरे अधिकार समान रूप से दिये गये। वे स्थानीय निकाय, विधान-सभा, संसद् तथा अन्य प्रतिनिधि-संस्थाओं के चुनावों में सब के समान भाग ले सके। यह सब बिल्कुल स्वाभाविक रूप से पूरे देश में हुआ। एक राज्य को छोड़कर अन्य किसी राज्य की जनता ने नवागंतुकों की भाषा, पूजा-पद्धति या रहन-सहन के आधार पर उनके प्रति दुराव नहीं बरता और राष्ट्रीय एकात्मता का पूरा परिचय दिया। उस एक राज्य का नाम है – जम्मू-कश्मीर। उसके राजनीतिक

नेतृत्व ने अपनी साम्प्रदायिक व पृथकतावादी मनोरचना का परिचय दिया और राज्य में रहने वालों को दो श्रेणियों में बाँटा। वहाँ के पुराने रहने वालों को 'रियासती' नागरिक कहा गया और बाद में आने वालों को 'बाहरी'। दोनों के अधिकारों में भी अन्तर किया गया। रियासती नागरिकों को सरकारी नौकरी पाने, अचल सम्पत्ति खरीदने और बनाने, मनपसंद शिक्षा-संस्थाओं में बच्चों को पढ़ाने और सभी प्रकार की प्रतिनिधि-संस्थाओं के चुनावों में भाग लेने का अधिकार दिया गया है, किन्तु दूसरी श्रेणी के नागरिक, भले ही वे राज्य में चार दशक से अधिक समय से रह रहे हों, इन अधिकारों से वंचित रखे गये हैं। यह कैसी विडम्बना है कि ये नागरिक, जिनकी संख्या एक लाख से ऊपर आँकी जाती है, भारत के नागरिक तो माने जाते हैं, किन्तु भारत के ही राज्य जम्मू-कश्मीर के नहीं। उन्हें लोकसभा के चुनाव में मतदान करने का अधिकार मिलता है, किन्तु जम्मू-कश्मीर विधान-सभा के चुनाव में नहीं। उनसे राज्य का टैक्स तो लिया जाता है, किन्तु उनको राज्य की नौकरी में प्रवेश नहीं दिया जाता और न ही राज्य में अचल सम्पत्ति बनाने या उद्योग स्थापित करने की अनुमति दी जाती है। भारत का चुनाव आयोग और सर्वोच्च न्यायालय उनको न्याय दिलाने में अपने को असमर्थ पाते हैं। यह धारा ३७० की ही माया है कि वहाँ राजनीतिक नेतृत्व उनके मौलिक व लोकतांत्रिक अधिकारों को हड़पे बैठा है।

इसी धारा की आड़ में लद्दाख व जम्मू क्षेत्र के 'रियासती' नागरिकों (बौद्धों व अन्य हिन्दुओं) को उनके पुराने चले आ रहे अधिकारों से व्यवहारतः वंचित कर दिया गया है। उनको कश्मीर घाटी में अचल सम्पत्ति बनाने या खरीदने की सामान्यतः अनुमति नहीं दी जाती है। ६ दिसम्बर १९६८ को वरिष्ठ राजनेता श्री अटल विहारी वाजपेयी ने जम्मू-निवासी डॉ. जे. आर. सेठी के मामले को संसद् में उठाते हुए जब यह आरोप लगाया कि जम्मू-निवासियों के साथ कश्मीर घाटी में भेदभाव बरता जा रहा है, तो भारत सरकार को उसका कोई उत्तर देते नहीं बना। जम्मू-कश्मीर राज्य के नागरिक भारत के किसी भी भाग में जाकर बस सकते हैं, अचल सम्पत्ति बना व खरीद सकते हैं, उस क्षेत्र के अन्य नागरिकों के समान सभी मौलिक व लोकतांत्रिक अधिकारों का

उपयोग कर सकते हैं, क्योंकि वे भारत के नागरिक हैं, किन्तु यदि देश के अन्य भागों के नागरिक जम्मू-कश्मीर में बसना चाहें, तो वहाँ वे 'बाहरी' माने जाते हैं और उनको सामान्य नागरिक अधिकारों से वंचित रखा जाता है। इसका यही तो अभिप्राय हुआ कि भारत का समान नागरिकता और अधिकारों का सिद्धान्त जम्मू-कश्मीर राज्य में प्रवेश करते ही निष्प्रभाव हो जाता है। भारतीय सीमाओं की रक्षा और आन्तरिक सुरक्षा-व्यवस्था के लिए भारत सरकार ने राज्य में अनेक छावनियाँ बनायी हैं, जहाँ भारत के विभिन्न प्रान्तों से आये हुए अधिकारी व सैनिक रहते हैं। उनमें से हजारों ऐसे हैं, जो वर्षों से अपने परिवार-जनों के साथ जम्मू-कश्मीर राज्य में रह रहे हैं। उनकी सेवा और निष्ठा राज्य व राष्ट्र के लिए गौरव का विषय है। उसी प्रकार राज्य की आर्थिक व औद्योगिक उन्नति के लिए अनेक सरकारी प्रतिष्ठान व परियोजनाएँ राज्य में चलायी जा रही हैं। उनमें भी भारत के कोने-कोने से आये हुए लोग अधिकारी व कर्मचारी के नाते कार्य कर रहे हैं और अनेक वर्षों से परिवार-जनों के साथ राज्य में ही रह रहे हैं। यही स्थिति भारत सरकार व राज्य सरकार द्वारा स्थापित प्रशासनिक कार्यालयों और बैंकों व वित्तीय संस्थानों की है, जिनमें भारत के कोने-कोने से लोग आकर काम कर रहे हैं। अनुमान है कि ऐसे निष्ठावान् भारतीय नागरिकों की संख्या ८ लाख के लगभग है। यह कैसी विडम्बना है कि जो राज्य उनकी सेवाओं व सहयोग से आज तक सुरक्षित रह सका है और आर्थिक दृष्टि से देश के अनेक राज्यों से आगे पहुँच सका है, वही उनको अचल सम्पत्ति बनाने-खरीदने, अपने बच्चों को इंजीनियरिंग व आयुर्वेदिक कालेजों में पढ़ाने जैसे सामान्य नागरिक अधिकारों से भी वंचित रख रहा है। उनको राज्य विधान-सभा व स्थानीय निकायों के चुनावों की मतदाता-सूची में भी सम्मिलित नहीं किया गया है, भले ही वे वहाँ ३-४ दशकों से रहते आ रहे हैं। न जाने कितने प्राध्यापक, मेडिकल कालेज के डाक्टर, प्रोफेसर, न्यायालय के माननीय न्यायाधीश और अखिल भारतीय सेवाओं से सम्बद्ध अधिकारी इन अधिकारों से वंचित हैं। धारा ३७० की वकालत करने वालों को इस अन्यायपूर्ण स्थिति पर विचार करना होगा। भारतीय संविधान की धारा ३७० की महिमा ही ऐसी है।

. केन्द्रीय सरकार और राज्य सरकारों के बीच कार्य-विभाजन हेतु भारतीय संविधान ने संघ-सूची, राज्य-सूची और समवर्ती सूची का प्रावधान किया है। उसी के साथ संविधान की धारा २४९ द्वारा यह व्यवस्था भी की गयी है कि यदि राज्य-सूची में अंकित कोई विषय किसी परिस्थिति में राष्ट्रीय महत्त्व का हो जाये, तो उसके बारे में नियम बनाने की शक्ति भारतीय संसद् में निहित होगी। तीनों सूचियों में अंकित विषयों के अतिरिक्त जो अवशिष्ट विषय हैं, उन पर भी कानून बनाने की शक्ति संसद् को दी गयी है। किन्तु धारा ३७० के कारण भारत की संसद् अपनी इन दोनों शक्तियों का प्रयोग जम्मू-कश्मीर राज्य के संदर्भ में नहीं कर सकती है।

०. विदेशी आक्रमण अथवा आन्तरिक सशस्त्र विद्रोह की स्थिति में यदि राष्ट्रपति संविधान के अनुच्छेद ३५२ के अन्तर्गत आपात स्थिति की घोषणा करें, तो वह शेष पूरे भारत पर लागू हो जायेगी, किन्तु जम्मू-कश्मीर पर नहीं। महामहिम राष्ट्रपति के आदेश को, जम्मू-कश्मीर राज्य चाहे तो अस्वीकार कर दे। इसी प्रकार भारतीय संविधान का अनुच्छेद ३५० राष्ट्रपति को जम्मू-कश्मीर को छोड़कर पूरे देश में या उसके किसी विशिष्ट भाग में वित्तीय संकट की उद्घोषणा करने का अधिकार देता है। जम्मू-कश्मीर राज्य उनके अधिकार-क्षेत्र से उसी धारा ३७० की आड़ में अलग रख दिया गया।

उपर्युक्त विवरण को देखते हुए संविधान की धारा ३७० का प्रभाव संक्षेप में इस प्रकार कहा जा सकता है कि भारत के राष्ट्रपति के आदेश और भारतीय संसद् के संकल्प जम्मू-कश्मीर के लिए अर्थहीन रहेंगे यदि वहाँ की विधान-सभा उनको अस्वीकार कर दे, अर्थात् जम्मू-कश्मीर भारत का अंग रहते हुए भी मानो अंग नहीं है। ऐसी सांविधानिक बाधा देश की स्वतन्त्रता और अखण्डता के लिए कितना बड़ा संकट है, इसका अनुमान लगाना कठिन नहीं।

भारत व जम्मू-कश्मीर के सम्बन्ध पर इसका यह प्रभाव हुआ कि वह राज्य भारत का अभिन्न अंग नहीं बन सका। क्षेत्रीय तथा साम्प्रदायिक पृथकतावाद की जीत हुई और देश की भावनात्मक एकता को संविधान के आंगन में ही घायल कर दिया गया। उसके पुनः स्वस्थ होकर उठ खड़े होने के लिए हमें राष्ट्रीय अखंडता की संजीवनी लानी होगी जिसके प्रयोग से जम्मू-कश्मीर से कन्याकुमारी तक भारत पुनः अपने स्वाभाविक रूप में राष्ट्र-पुरुष के नाते खड़ा हो सके।

निरस्त करने के उपाय

ऐसा प्रचार किया जाता है कि धारा ३७० को समाप्त करने के मार्ग में अनेक सांविधानिक बाधाएँ हैं। इसमें सबसे बड़ी बाधा यह बतायी जाती है कि जम्मू-कश्मीर राज्य अर्थात् उसकी विधान-सभा की स्वीकृति के बिना यह संभव नहीं है, जिसे प्राप्त करना वर्तमान राजनीतिक परिस्थितियों में संभव नहीं है। तो क्या इस बाधा का कोई उपचार नहीं है ?

पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति रणजीतसिंह नरूला ने लिखा है कि "अगर मैं आज प्रधानमंत्री होता तो निश्चय ही धारा ३७० खत्म करने का कदम उठाता। मेरी राय यह है कि राज्यपाल-शासन के दौरान भी धारा ३७० को खत्म किया जा सकता है। कुछ ऐसी कानूनी प्रक्रियाएँ हैं जो हमें यह रास्ता बताती हैं।"

अन्तरराष्ट्रीय ख्याति के विधिवेत्ता डॉ. बाबूराम चौहान ने भी अपने निबन्ध 'कश्मीर प्रॉब्लम इन कान्स्टीट्यूशनल एण्ड इंटरनेशनल ला' में विधिसम्मत और प्रभावी ढंग से प्रतिपादित किया है कि इस घातक धारा को हटाने में जो सांविधानिक बाधाएँ बतायी जाती हैं, वे असाध्य नहीं हैं। यदि राष्ट्रीय नेतृत्व में आवश्यक इच्छाशक्ति हो, तो उस धारा को सदा-सर्वदा के लिए हटाया जा सकता है और इस राज्य सहित पूरे देश को संकट में डूबने से बचाया जा सकता है।

संसद् में गूँज

स्मरणीय है कि १९६४ में जब निर्दलीय सदस्य प्रकाशवीर शास्त्री ने धारा ३७० की समाप्ति से संबंधित एक विधेयक लोकसभा में पेश किया था, तो शास्त्रीजी के इस विधेयक का समर्थन एस. एम. बनर्जी तथा सरयू पाण्डेय जैसे कम्युनिस्ट नेताओं द्वारा भी किया गया था। डॉ. राममनोहर लोहिया और मधु लिमये ने तो इस विधेयक के पक्ष में अपने मत भी दिये थे। उसके बाद ३० अगस्त १९६८ को श्री अटल विहारी वाजपेयी ने धारा ३७० को समाप्त करने से संबंधित निम्नांकित संकल्प लोकसभा में प्रस्तुत किया था :

"इस सभा की राय है कि जम्मू-कश्मीर राज्य की वर्तमान असंगत स्थिति का अन्त किया जाना चाहिए, जिसमें यह राज्य भारत का अभिन्न अंग होते हुए भी इसका अलग संविधान है, अलग राज्याध्यक्ष है और अलग झण्डा है, और इस राज्य को

पूर्ण रूप से भारत के अन्य राज्यों के समान लाया जाना चाहिए और इस प्रयोजनार्थ यह सभा सिफारिश करती है कि सभी आवश्यक कार्यवाहियाँ, जैसे कि अनुच्छेद ३७० का निराकरण, तुरन्त आरंभ की जायें।"

इस प्रस्ताव पर दो दिन तक बहस चली जिसमें लगभग सभी राजनीतिक दलों के सांसदों ने भाग लिया। श्री अटल विहारी वाजपेयी ने अपने प्रस्ताव पर आरम्भ हुई परिचर्चा में बोलते हुए बताया था कि स्व. पं. जवाहर लाल नेहरू, भूतपूर्व विदेश मंत्री श्री चागला, जम्मू-कश्मीर के भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री बख्शी गुलाम मुहम्मद और श्री सादिक जैसे नेताओं ने भी इस धारा को अस्थायी बताया था और देश को आश्वस्त किया था कि इसको शीघ्र समाप्त किया जायेगा।

'वोट'-लोभी राजनीति की विडम्बना !

यह कैसी विचित्र स्थिति है कि जिस धारा की शीघ्र समाप्ति के औचित्य व आवश्यकता को इतने बड़े लोगों ने असंदिग्ध शब्दों में स्वीकारा, आज उसी धारा को टिकाये रखने की उद्घोषणाएँ एक के बाद दूसरे प्रधानमंत्री—श्रीमती इन्दिरा गांधी से लेकर राजीव गांधी व विश्वनाथ प्रताप सिंह तक सभी – करते सुने गये हैं। भारतीय जनता पार्टी को छोड़कर देश के सभी बड़े-छोटे राजनीतिक दल इस धारा को टिकाये रखने की ही बात करते हैं। कैसी बिडम्बना है कि पृथक्तावादी धारा को 'देश की आवश्यकता' और 'जोड़ने वाली' बताते हैं। कुर्सी की राजनीति की संभवतः माया ही ऐसी होती है कि "शत्रु" को 'मित्र' कहा जाता है ! राज्यपाल जगमोहन ने, अपने पहले शासन-काल में ही, इस धारा की आड़ में खेले जा रहे राष्ट्रघातियों के खेल को भाँप लिया था और तत्कालीन प्रधानमंत्री को अपनी रिपोर्ट में सावधान करते हुए कहा था कि इसके पूर्व कि स्थिति नियंत्रण के बाहर हो जाये, इस राष्ट्रघाती धारा को समाप्त करने हेतु आवश्यक पग उठाये जायें। किन्तु 'वोटों' की राजनीति ने सबको ही अंधा-बहरा जैसा बना दिया है !

शेख के पश्चात्....

सुजद अन्तराल

९ अगस्त १९५३ को शेख अब्दुल्ला की बर्खास्तगी के बाद बख्शी गुलाम मुहम्मद ने राज्य का नेतृत्व संभाला। उनके कार्यकाल के दौरान २६ जनवरी १९५६ को जम्मू-कश्मीर की संविधान-सभा ने राज्य का संविधान स्वीकृत किया और राज्य के भारतीय संघ में अन्तिम विलय की एक बार फिर पुष्टि की। राज्य के संविधान की धारा ३ और ५ में राज्य का भारतीय संघ में विलय न केवल अंतिम व पूर्ण घोषित किया गया, बल्कि यह भी संकल्प व्यक्त किया गया कि अब विलय के संबंध में भविष्य में भी शंका या प्रश्न नहीं उठाया जा सकेगा। अगले दिन से यह संविधान लागू होने के साथ-साथ संविधान-सभा विसर्जित कर दी गयी। संविधान-सभा के संकल्प के अनुसार भारत से जम्मू-कश्मीर में जाने के लिए परमिट प्रणाली सदा के लिए समाप्त कर दी गयी। भारत के नियंत्रक और महालेखा परीक्षक का कार्यक्षेत्र जम्मू-कश्मीर तक विस्तृत कर दिया गया। देश के सर्वोच्च न्यायालय का क्षेत्राधिकार भी राज्य पर लागू हो गया।

बख्शी गुलाम मोहम्मद के बाद कुछ समय के लिए शमसुद्दीन ने राज्य-प्रशासन की बागडोर संभाली। लेकिन शीघ्र ही उन्हें ख्वाजा गुलाम मोहम्मद सादिक के लिए मार्ग साफ करना पड़ा। सादिक ने नेशनल कान्फ्रेंस का विलय इंडियन नेशनल कांग्रेस में कर दिया। उल्लेखनीय है कि प्रजा परिषद् अपना विलय भारतीय जनसंघ में उससे पूर्व कर चुकी थी। सादिक के शासन-काल में जम्मू-कश्मीर के प्रधानमंत्री पद को देश के अन्य राज्यों की भाँति ही मुख्यमंत्री पद में बदल दिया गया। राज्य के सांविधानिक मुखिया 'सदरे-रियासत' के निर्वाचित पद को समाप्त करके भारतीय संघ के अन्य राज्यों की भाँति जम्मू-कश्मीर में भी भारत के राष्ट्रपति द्वारा राज्यपाल की नियुक्ति का क्रम आरंभ हो गया। इन सभी राजनीतिक पगों के उठाये जाने से जन-साधारण में यह विश्वास उत्पन्न होने लगा कि श्री नेहरू के कथनानुसार भारतीय संविधान की धारा ३७० धीरे-धीरे घिसते हुए स्वयं समाप्त हो जायेगी।

शेख की वापसी – बेताल फिर डाल पर

सादिक की मृत्यु के बाद कांग्रेस के नेता मीर कासिम जम्मू-कश्मीर के मुख्यमंत्री बने। किन्तु राज्य की राजनीति पर न तो उनकी कोई पकड़ थी और न ही उनका कोई राजनीतिक आधार था। इस बीच शेख अब्दुल्ला को मुक्त कर दिया गया था। यद्यपि उसने पहले की भाँति ही अलगाववादी नीतियों के आधार पर अपनी राजनीतिक साख फिर से जमाने का भरसक प्रयत्न किया, किन्तु उसको देश या विदेश कहीं से भी समर्थन प्राप्त नहीं हो सका। तब उसने तत्कालीन भारतीय प्रधानमन्त्री इन्दिरा गांधी की ओर दोस्ती का हाथ बढ़ाया। इन्दिरा की ओर से अनुकूल प्रतिक्रिया होने पर दोनों के बीच राजनीतिक समझौता हुआ। फलस्वरूप मीर कासिम ने शेख के लिए मुख्यमन्त्री की कुर्सी खाली कर दी। शेख ने अपने जनमत संग्रह मोर्चे को भंगकर भारत के प्रति निष्ठा की शपथ ली और इन्दिरा गांधी ने शेख को नेशनल कान्फ्रेंस को पुनर्जीवित करने की छूट दे दी। अवसर से लाभ उठाने के लिए उसने गिरगिट के समान, मात्र अपना रंग बदला था। वह फिर सत्ता में आया और अपना पुराना खेल फिर प्रारम्भ किया, यद्यपि इस बार अधिक चतुराई व सावधानी के साथ। वह अपने पग धीरे-धीरे आगे बढ़ा रहा था। किन्तु विधाता ने उसे अपने अरमान पूरे करने के लिए यथेष्ट समय नहीं दिया और १९८२ में उसकी मृत्यु हो गयी।

शेख के द्वारा जनमत संग्रह मोर्चा भंग कर नेशनल कांफ्रेन्स को पुनर्जीवित किये जाने की घटना को देशवासियों की आँख में धूल झोंकने की संज्ञा देते हुए जम्मू-कश्मीर राज्य के सेवानिवृत्त वरिष्ठ पुलिस अधिकारी सप्रमाण बताते हैं कि केवल संस्था का नामपट्ट बदला गया था। नेशनल कान्फ्रेन्स के मुखौटे के पीछे जनमत संग्रह मोर्चे का संगठन कार्य करने लगा – न उसकी विचारधारा बदली और न ही उसके व्यक्ति। यह अवश्य हुआ कि अवसर का लाभ उठाते हुए अनेक कुख्यात पाकपरस्त लोग उसमें घुस आये और देश को छला गया। श्रीमती इन्दिरा गांधी ने अवश्य अपनी तथाकथित सफलता पर अपनी पीठ थपथपायी होगी, किन्तु वह उनका भ्रम ही था।

विस्मयकारी रहस्य

सन् १९५८ से १९६४ के कालखण्ड में शेख-समर्थक तत्त्वों की गतिविधियों के सम्बन्ध में अवकाश प्राप्त आई. बी. निदेशक श्री मलिक ने सनसनीजनक

जानकारियाँ देशवासियों को अपनी पुस्तक 'माई इअर्स विद नेहरू' के माध्यम से दी हैं। वे इस प्रकार हैं : शेख और उनके परिवारजनों का पाकिस्तान के उच्च अधिकारियों से न केवल छद्म नामों से पत्राचार होता था, अपितु बड़े पैमाने पर उनको वहाँ से धन भी प्राप्त होता था। शेख अब्दुल्ला के लिए अजीम, बेगम अब्दुल्ला के लिए हमशीरा साहिबा और अफजल बेग के लिए अतीक नाम रखे गये थे। पाक गुप्तचर सेवा के नियाजी नामक अधिकारी द्वारा शेख के पास ३५ हजार रुपये एक ही बार में हमशीरा साहिबा के माध्यम से भेजने की जानकारी मिलती है। पाकिस्तान द्वारा इन लोगों के पास धन भेजे जाने का सिलसिला लगातार गुप्त पद्धति से जारी रहा। जब चीनी आक्रमण से पूरा देश मर्माहत था, तो यह परिवार खुले आम खुशियाँ मना रहा था। मलिक का तो यहाँ तक कहना है कि इस परिवार ने अपनी इस खुशी को कभी छिपाया नहीं और नेहरू तक से उसे प्रकट किया।

फारूख : बाप से बेटा सवाया

उसके बाद उसके उत्तराधिकारी एवं पुत्र फारूख अब्दुल्ला ने अपने पिता की राजनीतिक आकांक्षाओं को अर्थात् स्वतंत्र कश्मीर के सपने को साकार करने का बीड़ा उठाया। इसके पहले कि उसके उन कार्यकलापों का विवरण दिया जाये, उसके मुख्यमंत्री बनने से पूर्व के इतिहास को ध्यान में लेना अच्छा रहेगा।

राज्य का शासन-सूत्र संभालने से पूर्व वह लंदन में रहता था और वहाँ की ही नागरिकता ग्रहण की हुई थी। वहाँ रहते हुए वह जम्मू-कश्मीर मुक्ति मोर्चा (जे. के. एल.एफ.) से घनिष्ठ संबंध रखता था। इस संगठन के निमंत्रण पर उसने १९७४ में पाक-अधिकृत कश्मीर और पाकिस्तान की यात्रा की थी। उस यात्रा के दौरान फारूख ने जनमत-संग्रह मोर्चे के नेता अब्दुल खलीक अंसारी की प्रेरणा व प्रभाव से पाकिस्तान के प्रति निष्ठावान् रहने की शपथ ग्रहण की थी और जे. के. एल. एफ. के हाशिम कुरेशी, मकबूल बट्ट और अमानुल्ला खाँ जैसे नेताओं के साथ अनेक बार गुप्त मंत्रणाएँ भी की थीं। जे. के. एल. एफ. के साथ वह इस सीमा तक जुड़ गया था कि पाक-अधिकृत जम्मू-कश्मीर की यात्रा के दौरान उसने अमानुल्ला जैसे कुख्यात व्यक्ति को संगठन की शपथ एक समारोह में दिलायी थी। पाकिस्तान के तत्कालीन प्रधानमन्त्री भुट्टो और पाकिस्तानी नेता सिकन्दर हयात खाँ और खलीक अहमद के साथ, जो उन दिनों पाक-अधिकृत जम्मू-कश्मीर के प्रशासक थे, अनेक बार उसकी गुप्त मंत्रणाएँ हुई थीं। इसे देश का दुर्भाग्य ही कहना पड़ता है कि जैसे

नेहरू जी ने शेख के वास्तविक चरित्र को समझे बिना उसको राज्य की बागडोर देने की भयंकर भूल की थी, वैसी ही भूल उनकी पुत्री और तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने सन् १९८२ में की और फारूख जैसे व्यक्ति को उसके पिता के स्थान पर गद्दी पर बैठाया। उसने सत्ता संभालते ही घाटी के पृथक्तावादी नेता आवामी ऐक्शन कमेटी के चेयनमैन मीरवायज मौलवी मोहम्मद फारूख के साथ अपनी घनिष्ठता स्थापित की और साथ ही साथ उस समय के राज्य कांग्रेस(इं) के अध्यक्ष और आज के गृहमंत्री मुफ्ती मुहम्मद सईद तथा कांग्रेस(इं) के तत्कालीन उपाध्यक्ष गुलाम रसूल कार जैसे लोगों से भी गहरे रिश्ते स्थापित कर लिये। उल्लेखनीय है कि इसी गुलाम रसूल कार का लड़का पिछले दिनों राष्ट्रद्रोही कार्यवाहियों के कारण बंदी बनाया गया है। इन कांग्रेसी नेताओं से बनाये गये संबंधों ने जहाँ डॉ. फारूख के वास्तविक इरादों पर पर्दा डाले रखा, वहीं घाटी के पृथक्तावादी तत्त्वों को एक नये मुखौटे के पीछे संगठित होने का अवसर दिया। कश्मीर घाटी में पाक-परस्त तत्त्वों को बढ़ावा देने के लिए १९८२ में उसने विधानसभा में एक विधेयक पारित कराया जिसका उद्देश्य था १९४७ में या उसके बाद पाकिस्तान चले गये मुसलमानों को वापस बुलाकर उनका विधिवत् पुनर्वास कराना। किन्तु तत्कालीन राज्यपाल जगमोहन ने फारूख के गर्हित उद्देश्य को समय रहते भाँप लिया और उस विधेयक को अपनी सहमति नहीं दी।

पंजाब और कश्मीर के आतंकवादियों की सहायता

केवल कश्मीर के ही नहीं, पंजाब के पृथक्तावादियों और उग्रवादियों को भी उसने अपने शासन-काल में पूरा सहयोग दिया। उसके सहयोग से भिंडरावाला ने जम्मू-कश्मीर में उग्रवादियों के ६ प्रशिक्षण-केन्द्र चलाये। जून ८४ में हुए 'ब्लू स्टार आपरेशन' से पूर्व फारूख अब्दुल्ला ने स्वयं भिंडरावाले से भेंट की थी।

शासन में आने के बाद उसने कुख्यात जे. के. मुक्ति मोर्चे के लोगों को खुली सुविधाएँ देना आरम्भ कर दिया। पाकिस्तानी घुसपैठिये जम्मू-कश्मीर की पुलिस तथा अर्द्ध-सैनिक बलों में उसके संरक्षण में बड़ी संख्या में भरती हुए। १९८३ में श्रीनगर के बख्शी स्टेडियम में जब पाकिस्तानी झंडे फहराये गये, तब फारूख ने अपराधियों पर कड़ाई करना तो दूर रहा, जो कुछ पकड़े गये थे उन्हें भी छोड़ दिया। फारूख के शासनारूढ़ होने से पहले राज्य की पुलिस ने जिन सैकड़ों पाकिस्तानी नागरिकों और पाक-समर्थक कश्मीरियों को विभिन्न सुरक्षा कानूनों के अन्तर्गत बन्दी

बनाया था, उनमें से अधिकांश को फारूख ने रिहा कर दिया। छोड़े गये इन लोगों में वे २०० कश्मीरी आतंकवादी भी शामिल थे जो पाकिस्तान से शस्त्रास्त्रों का प्रशिक्षण प्राप्त कर घाटी में घुस आये थे।

बम फूटते रहे, अपराधी छूटते रहे, रेकार्ड टूटते रहे

फारूख के शासन संभालने के बाद पाक-समर्थकों द्वारा घाटी में बम-धमाकों का सिलसिला प्रारम्भ हुआ जो लगातार बढ़ता गया। १९८२ में दो, १९८३ में पन्द्रह, १९८४ में सत्ताईस, १९८५ में बयालीस, १९८६ में साठ, १९८७ में सत्तर, १९८८ में उन्नासी और १९८९ में तीन सौ बम-धमाके हुए। जब गुप्तचर विभाग द्वारा फारूख अब्दुल्ला को १९८६ में घाटी के गुलाम आजाद नामक आतंकवादी द्वारा मुस्लिम मुक्ति मोर्चे के गठन व कश्मीरी युवकों को शस्त्रास्त्र-प्रशिक्षण के लिए पाकिस्तान भेजे जाने और पाकिस्तान स्थित खूँखार आतंकवादियों के साथ उनके घनिष्ठ संबंधों की जानकारी दी गयी तो फारूख ने उसे मानने से इन्कार कर दिया।

फारूख के शासन-काल में आतंकवादियों को जो छूट मिली थी, वह उसके बीहनोई जी. एम. शाह के शासनकाल में भी जारी रही। राज्य में उग्रवादी पृथक्तावाद तेजी से बढ़ता गया। डॉ. फारूख ने सन् १९८९ के आरंभ में २३ खूँखार कश्मीरी आतंकवादियों को राष्ट्र की मुख्यधारा में लाने के नाम पर मुक्त कर दिया। उसके पश्चात् जुलाई-दिसम्बर के बीच २०० पाक-प्रशिक्षित कश्मीरी आतंकवादियों को भी, जिन्होंने अपना अपराध स्वीकार कर लिया था, छोड़ दिया गया। ऐसे ७० कट्टर आतंकवादियों को, जिनकी नजरबंदी को जम्मू-कश्मीर उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की अध्यक्षता में बनायी गयी समिति ने उचित घोषित किया था, फारूख द्वारा मुक्त कर दिया गया। इनमें मोहम्मद अफजल शेख, रफीक अहमद एहंगर, मुहम्मद अयूब नाजर, फारूख अहमद गनई, गुलाम मुहम्मद गुजरी, फारूख अहमद मलिक, नजीर अहमद शेख, गुलाम मोहिउद्दीन तेली, रियाज़ अहमद लोन और फारूख अहमद ठाकुर जैसे वे कुख्यात आतंकवादी भी शामिल थे, जिन्होंने आगजनी, बम-विस्फोटों, हत्याओं आदि के अनेक दुष्कृत्य किये थे। इनमें से कई तो पुलिस से मुठभेड़ करते हुए बन्दी बनाये गये थे और इन सभी आतंकवादियो के पास से भारी मात्रा में शस्त्रास्त्र बरामद हुए थे।

जब यह समाचार मिला कि केन्द्रीय गृहमंत्री मुफ्ती मुहम्मद सईद की पुत्री डॉ. रूबिया सईद का अपहरण कर लिया गया है, तो उस के साथ यह भी सूचना मिली

कि घाटी के दुर्दान्त ४५ आतंकवादियों को फारूख अब्दुल्ला के प्रशासन ने छोड़ दिया है। ये सब ऐसे प्रसंग हैं जिनसे आतंकवादियों और पृथकूतावादियों का हौसला लगातार बढ़ता गया है और कश्मीर घाटी को भारत से दूर ले जाने वालों का दबदबा बनता गया है।

गुलशाह – करेला नीम चढ़ा

फारूख अब्दुल्ला के दो कार्यकालों के बीच में उसके बहिनोई गुलाम मुहम्मद शाह का शासन-काल भी आतंकवादियों एवं पाक-समर्थक तत्त्वों के लिए वरदान सिद्ध हुआ। पाकिस्तान के प्रति उसकी सहानुभूति तो पहले से ही प्रकट थी, उसके १६ मास के शासन में प्रशासन-तंत्र पूरी तरह से पंगु बन गया था और हिंसा एवं तोड़फोड़ इतनी अधिक बढ़ गयी थी कि उसके शासन के प्रारम्भिक ९० दिनों में से ७२ दिन श्रीनगर में कर्फ्यू रहा। उसने श्रीनगर सचिवालय के परिसर में मस्जिद बनवाकर अपनी धर्मान्धता का खुला परिचय दे दिया था। ये मस्जिदें पाक-परस्त सरकारी कर्मचारियों की राष्ट्र-घातक गतिविधियों का केन्द्र बन गयीं और राज्य के प्रशासन-तंत्र पर पाकिस्तानी तत्त्वों को हावी होने का अवसर मिल गया।

इन्दिरा कांग्रेस ने जिस गुलाम मुहम्मद शाह को जम्मू-कश्मीर का मुख्यमंत्री बनवाया, वह किसी भी प्रकार से शेख अथवा फारूख से कम खतरनाक नहीं सिद्ध हुआ। उसने मुख्यमंत्री का पद संभालने के बाद खुले आम घोषणाएँ कीं कि वह पहले मुसलमान है और फिर और कुछ। वह चालाक भी बहुत था। उसने जहाँ एक ओर जमाते इस्लामी जैसे कट्टरपंथी व पृथकूतावादी संगठनों को बढ़ावा दिया, वहीं दूसरी ओर कांग्रसी नेताओं को लूट-खसोट करने और पैसा बटोरने की खुली छूट देकर उनका मुँह बंद रखा। उसी के शासन-काल में फरवरी १९८६ में कश्मीर घाटी में हिन्दुओं के पवित्र तीर्थों व मन्दिरों पर व्यापक पैमाने पर हमले हुए। लगभग ४० मन्दिरों को तोड़ा गया या जलाया गया और घाटी के ग्रामीण क्षेत्रों में हिन्दू नारियों के शील-भंग की अनगिनत घटनाएँ हुईं। अनन्तनाग जिले में हिन्दुओं के मकानों व दुकानों को दिन-दहाड़े लूटा व जलाया गया। जब शाह से इन घटनाओं की चर्चा राज्य के पत्रकारों ने की, तो उसने यह कहकर उनका मजाक बनाने की चेष्टा की कि इतने बड़े राज्य में ४-५ मन्दिर, ४-५ मस्जिदें टूट या जल गयीं तो क्या आफत आ गयी, शेष भारत में भी तो यह होता रहता है। सन् १९८६ में जब उसके मंत्रिमंडल

को बर्खास्त किया गया, तो उसने राज्य की पुरानी मुस्लिम कान्फ्रेन्स को पुनर्जीवित किया और रियासत को इस्लामी राज्य बनाना अपना लक्ष्य घोषित किया।

पुनः फारूख — पुरानी चाल बेढंगी

७ नवम्बर १९८६ को दुबारा सत्ता में आने पर फारूख ने अपनी शैली में कोई सुधार नहीं किया। सच्चाई तो यह है कि फारूख अब्दुल्ला प्रशासन-तंत्र पर नियंत्रण करने में कभी सफल नहीं रहा। रंगीन-मिजाज फारूख के पास इसके लिए समय ही नहीं था। इसका अनुमान इस बात से हो सकता है कि जब १९८४ के जून अन्त और जुलाई प्रारंभ में उसका तख्ता पलटने की योजना दिल्ली व श्रीनगर में बन रही थी, तब वह प्रसिद्ध पत्रिका 'संडे मेल' के अनुसार, मोटर साइकिल पर एक प्रसिद्ध सिने अभिनेत्री ज़ीनत अमान के साथ सोपोर की सैर का आनंद उठा रहा था।

राज्यपाल की चेतावनी

स्वतन्त्रता के ४३ वर्षों में से ३ दशक से भी अधिक वर्ष जम्मू-कश्मीर राज्य पर शेख अब्दुल्ला, उसका लड़का फारूख अब्दुल्ला और दामाद गुलाम मुहम्मद शाह जैसे लोग मुख्यमंत्री रहे। अर्थात् एक ऐसे परिवार का शासन रहा जिसे भारत के साथ भावनात्मक लगाव दिखावे मात्र का ही था, उनकी राजनीति का केन्द्र-बिन्दु 'भारतीय कश्मीर' नहीं रहा। वे 'आज़ाद कश्मीर' या 'पाकिस्तानी कश्मीर' के ताने-बाने बुनते रहे। इस कारण कश्मीर में भारत की प्रभुसत्ता अपनी जड़ें सुदृढ़ नहीं कर सकी, उल्टे उसकी जड़ों को ये लोग योजनापूर्वक खोखला करते रहे। उसी का परिणाम था कि राज्यपाल जगमोहन ने अपने पहले शासनकाल में तत्कालीन राजीव सरकार को इस आशय का एक गोपनीय संदेश लिखा था कि राज्य में हालात तेजी से बिगड़ रहे हैं। सब कुछ लगभग बेकाबू हो गया है। सबसे अधिक चिन्ताजनक बात यह है कि सरकारी नीतियाँ आतंकवादियों के हौसले बढ़ा रही हैं और वे भारत सरकार के प्रतिनिधियों व प्रशासनिक अधिकारियों के विरुद्ध दुश्मनी साधने लगे हैं। उन्होंने भारत सरकार को यह भी स्पष्ट बता दिया था कि यद्यपि उन्होंने मुख्यमंत्री को स्थिति से अवगत करा दिया है, लेकिन उसका कोई परिणाम नहीं होना है क्योंकि मुख्यमंत्री की कोई बिसात नहीं बची है। उनका राजनीतिक एवं प्रशासनिक दोनों ही प्रकार का प्रभाव समाप्त हो चुका है। वे केवल सांविधानिक खाना-पूर्ति हैं। हालात

की माँग है कि तुरन्त प्रभावी हस्तक्षेप किया जाये। राज्यपाल जगमोहन ने प्रधानमंत्री को यहाँ तक लिख दिया था कि समय बहुत कम है, कल तक हो सकता है कि बहुत देर हो जाये। किन्तु राज्यपाल द्वारा दी गयी इस गंभीरतम चेतावनी के संदर्भ में भारत सरकार द्वारा उस समय कुछ नहीं किया गया।

दूसरी बार जगमोहन

जम्मू-कश्मीर की स्थिति को हाथ से बाहर जाते देखकर भारत सरकार ने जगमोहन को, जो एक बार पहले जम्मू-कश्मीर के राज्यपाल रह चुके थे, दुबारा राज्य का राज्यपाल नियुक्त किया। जगमोहन अपने पहले कार्यकाल में राज्य में बहुत लोकप्रिय हुए थे। उनकी प्रशासनिक क्षमता, सूझबूझ और न्यायप्रियता का सभी सिक्का मानते हैं, इसलिए कुछ राजनीतिक नेताओं को छोड़कर आम भारतवासी ने उनकी नियुक्ति का स्वागत किया। लेकिन उनका राज्य में पहुँचना उन लोगों की योजनाओं पर पानी फेरने वाला था जो जम्मू-कश्मीर को भारत से अलग करके पृथक् और स्वतंत्र राज्य बनाना चाहते थे या उसे पाकिस्तान में मिलाना चाहते थे, इसलिए उन्होंने उनकी नियुक्ति पर अपना कठोर विरोध प्रकट किया। फारूख अब्दुल्ला, जिसकी नस-नस से जगमोहन परिचित थे, बहुत घबराया और भागकर दिल्ली आया व राजीव गांधी से मिला। दिल्ली से वापस जम्मू पहुँचकर उसने मुख्यमंत्री पद से त्यागपत्र दे दिया। उसको और उसके समर्थकों को आशा रही होगी कि उसके त्यागपत्र से देश व राज्य में तहलका मच जायेगा और भारत सरकार को जगमोहन को वापस बुलाना पड़ेगा, किन्तु पाँसा उल्टा पड़ा। जगमोहन ने पूरी तत्परता से प्रशासन संभाल लिया। उनका दबदबा ऐसा था कि शासन-तंत्र में नया माहौल बनने लगा। भारत के प्रति निष्ठा रखने वालों के हौसले बुलंद हुए। जगमोहन को राजनीतिक परिस्थिति समझने में देरी नहीं लगी। वे जानते थे कि यदि देशघातियों को कुछ और समय मिला, तो वे उनके भी पैर नहीं जमने देंगे। जगमोहन राज्य के प्रायः सभी विधायकों को निजी-स्तर पर पहचानते थे और उनकी हानि पहुँचा सकने की क्षमता से भी भलीभाँति परिचित थे। अतः उन्होंने एक साहसिक कदम उठाने की ठान ली और अपने जम्मू पहुँचने के तुरन्त बाद राज्य की विधान-सभा भंग कर दी। संदिग्ध राजनेता देखते ही देखते धरती पर जा गिरे। पाकिस्तानी तत्त्वों के हौसले पस्त होने लगे। दिल्ली के राजनेताओं ने श्रीनगर जाकर उन लोगों की पीठ थपथपानी चाही, किन्तु श्रीनगर और घाटी के वातावरण ने उन्हें भी हिला दिया। राजनेताओं से छिपा नहीं रह सका कि घाटी में भारत का शासन सेना के आधार पर ही टिका

हुआ है। सामान्य जन भयभीत है। युवा भारत-विरोधी बन चुके हैं। प्रशासन पर पृथकूतावादी हावी हैं। जगमोहन की ही यह कुशलता और दृढ़ता थी कि उन्होंने हारी हुई बाजी को संभाल लिया था। पाकिस्तानी तत्त्व पकड़े जाने लगे थे। उनके घरों से बहुत बड़ी मात्रा में शस्त्रास्त्र बरामद होने लगे थे। धीरे-धीरे भारत के शासन का दबदबा फिर बनना आरम्भ हुआ था। जगमोहन ने बहुत तेजी के साथ पृथकूतावादी सरगनाओं को धर दबोचा। पाकिस्तानी जिहाद को आगे बढ़ाने वाले सम्पादकों व जमाते इस्लामी के नेताओं पर देखते-देखते हाथ रख दिया। पाकिस्तानी तत्त्वों ने भी अपने हमलों में तेजी लाने का प्रयास किया और स्थान-स्थान पर मुठभेड़ें प्रारंभ हो गयीं। जगमोहन ने शेर की माँद में घुसने का साहस दिखाया और पूरी घाटी में और विशेषकर श्रीनगर में घर-घर में तलाशी करवायी। इस अभियान में अनेक आतंकवादी नेता और शस्त्रास्त्रों के भंडार सेना के हाथ लगे, किन्तु पाकिस्तानी तत्त्वों का मोर्चा भी कमजोर नहीं था। उनके आतंक ने हिन्दुओं को घाटी छोड़ने के लिए विवश कर दिया। अपहरण की घटनाएँ आये दिन हो रही थीं। डॉ. फारूख और उसके बहिनोई गुलाम मुहम्मद शाह का बोया हुआ विष सामने आ गया था। किन्तु सेना व सुरक्षा-बलों ने बड़े साहस व सूझ-बूझ के साथ मैदान जीतना प्रारम्भ कर दिया था। राज्य के वातावरण में परिवर्तन आने लगा था, किन्तु भारत सरकार के कश्मीर के प्रभारी मंत्री जार्ज फर्नाण्डीज की गतिविधियाँ और वक्तव्य जगमोहन व सुरक्षा-बलों के मार्ग में रोड़ा डाल रहे थे, फिर भी उन्होंने साहस नहीं छोड़ा और पाकिस्तानी तत्त्वों पर दबाव बनाये रखा। कर्फ्यू आदेश, घर-घर की तलाशी, पाकिस्तानी सरगनाओं की पकड़-धकड़, पाकिस्तान से प्रशिक्षण लेकर शस्त्रास्त्रों के साथ आने वालों की नाकाबंदी जैसी बातें किसी भी देशभक्त को सुहातीं, किन्तु कैसी विडम्बना है कि जार्ज, चन्द्रशेखर जैसे जनता दल के नेताओं को तथा राजीव व उनके साथियों को चुभती थीं और ये लोग जगमोहन को कोसते हुए कभी थकते नहीं थे। तभी मौलवी फारूख की हत्या हो गयी और उसके जनाजे के जुलूस में सम्मिलित आतंकवादियों ने व्यवस्था में लगे सुरक्षाकर्मियों पर गोली चलायी, सेना ने भी जवाबी गोली चलायी। अनेक लोग मारे गये व घायल हुए। यद्यपि जगमोहन की इस दुःखद घटना में कोई ऐसी भूमिका नहीं थी, जिस पर आपत्ति की जा सकती हो। किन्तु उनके विरोधियों ने इसका राजनीतिक लाभ उठाया और ऐसा प्रचण्ड विराधी वायुमंडल बनाया कि जगमोहन को त्याग-पत्र देना पड़ा। जगमोहन-विरोधी

खेमे की जीत हुई, किन्तु सुरक्षा-बल व सेना तथा देशभक्त नागरिकों पर मानो गाज गिर गयी हो। पृथकृतावादी विजयोत्सव मनाने लगे। नासमझ कहें या कुर्सी के लालची, राजनेता भी अन्दर-अन्दर खुश हुए।

यह तो समय ही बतायेगा कि उन्होंने जगमोहन को वापस बुलाकर देश की कितनी बड़ी क्षति की है। सन्तोष का विषय इतना ही है कि भले ही जगमोहन वापस आ गये हैं, किन्तु भारत सरकार ने तथा उनके स्थान पर पहुँचे गिरीश चन्द्र सक्सेना ने पूर्व की नीतियों और योजनाओं को ही आगे बढ़ाया है। उससे पर्याप्त लाभ भी हुआ है। अभी हाल में ही राज्य-प्रशासन को उग्रवादी खेमे के शीर्षस्थ नेताओं को धर-दबोचने में सफलता मिली है, जिससे उन लोगों में हड़कंप मच गया है। ऐसे मोड़ पर पाकिस्तानी नेतृत्व में भी अचानक परिवर्तन आया है। अनुदारवादियों का वहाँ वर्चस्व बढ़ा है, जिसका परिणाम भारत के लिए प्रतिकूल होने की आशंका है। वैसे भी जब पाकिस्तान में आन्तरिक कलह बढ़ती है, तो वे भारत के प्रति टकराहट की भाषा बोलकर और आवश्यकता होने पर प्रत्यक्ष टकराकर भी अपने नागरिकों का ध्यान आन्तरिक समस्याओं पर से हटाते रहे हैं। ऐसी स्थिति में भारत को अब और अधिक सजग रहना होगा।

वर्तमान स्थिति

भारत सरकार की दोषपूर्ण नीतियों और प्रदेश के राष्ट्रघाती राजनीतिक नेतृत्व ने राज्य की स्थिति को अत्यन्त विस्फोटक बना दिया है। आज सम्पूर्ण जम्मू-कश्मीर अलगाव के कगार पर खड़ा दिखाई दे रहा है। स्थान-स्थान पर बम-विस्फोट हो रहे हैं। राष्ट्रीय मान-बिन्दुओं के प्रतीक, पवित्र धर्मस्थल और पावन मन्दिर भूमिसात् किये जा रहे हैं। वरिष्ठ सरकारी अधिकारी और महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों और राष्ट्रभक्त नागरिकों को चुन-चुन कर मारा जा रहा है। कश्मीर घाटी से लगभग सभी हिन्दुओं को खदेड़ा जा चुका है। आज वहाँ पर कोई भी बड़े से बड़ा व्यक्ति अपने आपको सुरक्षित अनुभव नहीं कर पा रहा है। किसी का भी अपहरण और हत्या की जा सकती है। प्रशासनिक व्यवस्था में ऊपर से नीचे तक राष्ट्रघाती तत्त्व किस सीमा तक प्रवेश कर गये हैं और उनकी मानसिकता कैसी है, इसका सहज अनुमान इस बात से किया जा सकता है कि राज्य के १३७ अफसरों ने भारतीय सैन्य बलों और विशेषकर राज्यपाल जगमोहन द्वारा उठाये गये सुरक्षा सम्बन्धी पगों की सार्वजनिक निंदा की और एक सांझा शिकायती पत्र संसार भर में प्रसारित किया। सीमा-पार क्षेत्र से पाकिस्तानी तत्त्वों का बड़ी संख्या में कश्मीर घाटी में निरन्तर आवागमन बना हुआ है। भारी मात्रा में शस्त्रास्त्र और विस्फोटक पदार्थ वहाँ से लाये जा रहे हैं। युवकों को जबरदस्ती आतंकवादी गतिविधियों में प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए पाकिस्तान भेजा जा रहा है। सभी राजनीतिक दल कश्मीर घाटी में अपनी गतिविधियाँ पूरी तरह बन्द करने के लिए बाध्य कर दिये गये हैं। उनके नेताओं तथा कार्यकर्ताओं को चुन-चुन कर मारा जा रहा है। भारत सरकार के प्रायः सभी कार्यालय तथा प्रतिष्ठान उजड़ गये हैं, क्योंकि उनके अधिकारियों और कर्मचारियों को कश्मीर छोड़ने के लिए विवश कर दिया गया है और उनके नाम-पट्टों (साइन बोर्डों) से भारत/हिन्दुस्तान/इंडिया जैसे शब्द मिटा दिये गये हैं। बौद्ध हों या सिख अथवा कश्मीरी पंडित, हिन्दुओं के सभी सम्प्रदाय आज कश्मीर घाटी में अपने अस्तित्व के लिए खतरा

अनुभव कर रहे हैं।

वास्तविक सत्ता उग्रवादियों के हाथों में है। उनका आतंक छाया हुआ है। वे जब चाहते हैं हड़ताल करवा लेते हैं। हिन्दुओं को पत्र द्वारा और मस्जिदों के लाउडस्पीकरों द्वारा धमकी दी जा रही है कि वे कश्मीर घाटी छोड़कर भाग जायें तथा जाते समय अपने साथ अपनी सम्पत्ति अथवा युवा महिलाओं को न ले जायें। कितने ही हिन्दू नेताओं व अधिकारियों की हत्या की जा चुकी है जिनमें भा. ज. पा. के प्रादेशिक उपाध्यक्ष एवं सुप्रसिद्ध अधिवक्ता टीकालाल टिपलू, अनन्तनाग के प्रमुख वकील प्रेमनाथ भट्ट, न्यायाधीश नीलकंठ गंजू, जिन्होंने मुक्ति मोर्चा के कुख्यात नेता मकबूल बट्ट को फाँसी की सजा दी थी, दूरदर्शन के निदेशक लस्सा कौल, पी. एन. हाण्डू, ए. एन. रैना, एम. एल. भान, टी. वी. राजदान, एस. के. टिक्कू, एन. सप्रू, के. के. कौल, ए. के. वजीर, एच. एम. टी. श्रीनगर के महाप्रबन्धक एच. एल. खेड़ा, भारतीय वायुसेना के चार वरिष्ठ अधिकारी और केन्द्रीय गुप्तचर सेवा के एक वरिष्ठ अधिकारी, कश्मीर विश्वविद्यालय के कुलपति मुशीर उल हक तथा उनके निजी सचिव सहित अनेक लोग सम्मिलित हैं। यदि कोई मुसलमान आतंकवादियों के मार्ग में बाधक बनता है तो उसे भी छोड़ा नहीं जाता।

विस्थापितों की दुर्दशा

दो लाख से अधिक हिन्दू घाटी छोड़कर जम्मू क्षेत्र में तथा देश के अन्य भागों में शरण लेने पहुँच चुके हैं। जम्मू क्षेत्र तो विस्थापितों से पट गया है। ये विस्थापित लोग प्रायः सुशिक्षित हैं और अपनी आजीविका अर्जित करने वाले रहे हैं, किन्तु अब विवश हैं। अपने ही देश में आज शरणार्थी कहलाते हैं। उनमें से कितने ही ऐसे हैं जो लाखों की चल-अचल सम्पत्ति छोड़कर आये हैं। आते समय उनके तन पर जो कपड़े थे, बस उतनी ही उनकी सम्पत्ति रह गयी थी। खेद का विषय है कि केन्द्र और राज्य की सरकारों ने प्रारम्भ में उनकी समस्याओं पर मानवीय दृष्टि से भी विचार नहीं किया। उनकी असहाय स्थिति यही कहानी कह रही है। कुछ सामाजिक संगठनों ने उदारमना नागरिकों के सहयोग से उनकी तात्कालिक आवश्यकता-पूर्ति के लिए हाथ बढ़ाया। किन्तु उनकी भी सीमाएं हैं। एक सन्तोष का विषय है कि राष्ट्रीय स्वयसेवक संघ के कार्यकर्ताओं की अपील पर देशवासियों और कुछ राज्य सरकारों व औद्योगिक प्रतिष्ठानों ने इन विपदाग्रस्त लोगों के लिए

धन, वस्त्र, बर्तन, ओषधियाँ और खाद्य-सामग्री आदि भेजी हैं और भेजते जा रहे हैं। भारतीय जनता पार्टी ने भी उनकी सहायता के लिए एक अखिल भारतीय कोष की स्थापना की है जिससे वे शिविर में रहने वालों को नगदी व अन्य प्रकार की सहायता दे रहे हैं। जम्मू स्थित कश्मीर सहायता समिति नामक समाज-सेवियों का एक संगठन उभर कर सामने आया है। राज्य के सामान्य जन का विश्वास व सहयोग उसको मिला। राजनीति, सम्प्रदाय और क्षेत्रवाद से ऊपर उठकर कार्य करने वाले इस संगठन को विस्थापित बन्धुओं और सरकारी क्षेत्र, दोनों का विश्वास मिला। देश की कई राज्य सरकारों (मध्य प्रदेश, हिमाचल, गुजरात, राजस्थान) ने सहयोग का हाथ बढ़ाया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ जम्मू-कश्मीर के संघचालक वैद्य विष्णु दत्त की अध्यक्षता में कार्य कर रही इस समिति की भूमिका स्मरणीय रहेगी।

गैरजिम्मेदार मन्त्री

लद्दाख तथा जम्मू क्षेत्रों को भी मुस्लिम-बहुल बनाने का व्यापक षड्यंत्र चल रहा है। संक्षेप में स्थिति बहुत जटिल एवं भयावह हो गयी है। जगमोहन जैसे प्रशासक भी बड़े परिश्रम के बाद ही कुछ मात्रा में नियंत्रण कर सके। चिन्ता का विषय है कि भारत सरकार अब भी समस्या के वास्तविक स्वरूप के बारे में भ्रमित है। कश्मीर घाटी से आगे बढ़कर जम्मू क्षेत्र के राजौरी, पुंछ, डोडा, किश्तवाड़ और भद्रवाह जैसे संवेदनशील सीमावर्ती क्षेत्रों में पाक समर्थक तत्त्वों की बढ़ती हुई गतिविधियों और हिन्दुओं पर किये गये हिंसक आक्रमणों की समस्या जब मई १९९० में केन्द्रीय गृहमन्त्री मुफ्ती मुहम्मद सईद के सामने उठायी गयी तो उन्होंने यह कहकर उसकी उपेक्षा कर दी कि इसमें कोई नयी बात नहीं है और जम्मू के इस क्षेत्र में हिन्दू-मुस्लिम दंगे होते ही रहते हैं। जम्मू-कश्मीर के जानकार सूत्रों का कहना है कि सईद साहब और फारूख एक ही थैली के चट्टे-बट्टे रहे हैं, भले ही आज कुछ अलग दिखाई देते हैं।

केन्द्रीय मन्त्रिमंडल के दूसरे सदस्य और कश्मीर संबंधी मामलों के भूतपूर्व प्रभारी मंत्री जार्ज फर्नाण्डीज ने भी अलीगढ़ विश्वविद्यालय की एक सभा में कश्मीर के राज्यपाल की खुली आलोचना की। वरिष्ठ मंत्रियों के ऐसे वक्तव्यों से यही प्रकट होता है कि मंत्रिमंडल के सदस्य भी स्थिति के विषय में एकमत नहीं हैं और वे अपनी-अपनी विचारधारा और निजी राजनीतिक हितों से प्रेरित होकर कुछ भी बोलते रहते हैं।

नेशनल कान्फ्रेंस, कांग्रेस(इ) तथा वामपंथी व अन्य दलों की नीतियाँ और वक्तव्य भी उसी प्रकार भ्रामक हैं और वे देश-हित के स्थान पर दलीय स्वार्थों को सामने रखकर चल रहे हैं।

रोग का सही निदान आवश्यक

इसी प्रकार अनेक बुद्धिजीवी, पत्रकार और राजनीतिक प्रेक्षक वास्तविकता से बहुत अलग सोच रहे हैं। उनमें से कुछ का मानना है कि घाटी की यह स्थिति वहाँ के आर्थिक पिछड़ेपन और राजनीतिक घुटन का परिणाम है। वे यह भूल जाते हैं कि कश्मीर घाटी की तुलना में लद्दाख और जम्मू का क्षेत्र कहीं अधिक पिछड़ा हुआ है। यदि आर्थिक पिछड़ापन इस अलगाववाद का कारण होता तो घाटी के बजाय राज्य के दूसरे क्षेत्रों में यह भड़कना चाहिए था। राज्य सरकार द्वारा प्रकाशित आँकड़े स्वयं ही इस विषय में बहुत कुछ कह देते हैं।

स्वाधीनता मिलने के समय जम्मू में १५३८ किलोमीटर और कश्मीर घाटी में ७४८ किलोमीटर सड़क मार्ग था। लेकिन मार्च १९८९ में स्थिति भिन्न हो गयी। राज्य सरकार द्वारा प्रदत्त आँकड़ों के अनुसार मार्च १९८९ तक जम्मू में सड़क मार्ग बढ़कर ४०४१ किलोमीटर ही हो पाया, जबकि कश्मीर घाटी में सड़क मार्ग की लम्बाई बढ़कर ५३५० किलोमीटर हो गयी है। क्षेत्रफल की दृष्टि से जम्मू का क्षेत्र कश्मीर घाटी से बहुत अधिक है। वास्तविकता तो यह है कि आज कश्मीर घाटी के २८७६ ग्रामों में से २०८६ ग्राम मुख्य सड़कों से जुड़े हुए हैं। घाटी का प्रायः प्रत्येक गाँव आज सड़क-मानचित्र पर है। अपवाद केवल कुछ दूरस्थ दुर्गम पहाड़ी गाँव हैं। मेडिकल शिक्षा में प्रतिवर्ष श्रीनगर स्थित मेडिकल कालेज के ६६ से लेकर ७० प्रतिशत तक स्थानों पर कश्मीर घाटी के मुस्लिम विद्यार्थियों को ही प्रवेश मिलता है। इसी के फलस्वरूप श्रीनगर स्थित शेरे-कश्मीर चिकित्सा संस्थान उग्रवादियों और पृथकूतावादियों का केन्द्र बन चुका है। डा. गोरू और खोरू उनके कुख्यात नेता हैं। राज्य की स्वास्थ्य-सेवाओं के निदेशक डा. दाबू को आतंकवादियों की सहायतार्थ गठित की गयी चिकित्सा-इकाई का संस्थापक बताया जाता है। इसके विपरीत जम्मू के मेडिकल कालेज का स्वरूप अत्यन्त छोटा है। घाटी-स्थित इंजीनियरिंग कालेज की भी यही रामकहानी है। जम्मू या लद्दाख क्षेत्र में कोई इंजीनियरिंग कालेज तो है ही नहीं। राज्य-सेवाओं पर कश्मीर घाटी के लोगों का एकाधिकार है।

जहाँ तक राजनीतिक घुटन की बात है, वह भी निराधार है। पिछले ४३ वर्षों में राज्य का मुख्यमंत्री घाटी का ही व्यक्ति होता रहा है और सरकार के प्रायः सभी

महत्त्वपूर्ण पद घाटी वालों के पास रहे हैं। इन तथ्यों के प्रकाश में राजनीतिक घुटन की बातें करना अपने को धोखे में रखना है।

यह समझना भी भूल होगी कि कश्मीर घाटी के लोग जम्मू-अथवा लद्दाख की तुलना में अधिक सजग हैं, इसलिए वहाँ आन्दोलन है और जम्मू क्षेत्र के लोग ढीले-ढाले हैं इसलिए वहाँ अशान्ति नहीं है। श्री प्रेमनाथ डोगरा के नेतृत्व में प्रजा परिषद् और जम्मू क्षेत्र की जनता द्वारा चलाया गया 'एक देश–एक विधान–एक निशान' का आन्दोलन जम्मू की राष्ट्रीय चेतना और बलिदानी परम्परा का ज्वलन्त उदाहरण है। जम्मू क्षेत्र के इस आन्दोलन की सफलता इस बात से आँकी जा सकती है कि डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी के नेतृत्व में केरल से कश्मीर तक के जागरूक नागरिक व भारतीय जनसंघ का अखिल भारतीय संगठन प्रजा परिषद् के समर्थन में आन्दोलन में कूद पड़े। शेख अब्दुल्ला की देशद्रोहिता के विरुद्ध छेड़ा गया उनका वह बलिदानी सत्याग्रह भारतीय आन्दोलनों के इतिहास का सबसे गौरवशाली पृष्ठ है। उसका स्मरण हमें अनेक संकेत देता है। अच्छा होगा कि संबंधित पक्ष उसको ध्यान में रखें। कश्मीर घाटी की यह स्थिति उनकी राजनीतिक चेतना का परिणाम नहीं है, वरन् पिछले ४३ वर्षों में रियासत के राजनीतिक नेतृत्व द्वारा भड़काये गये मजहबी उन्माद और पृथकतावाद का परिणाम है। जम्मू क्षेत्र और लद्दाख के लोग घाटी के आन्दोलनकारियों के साथ न हैं और न होंगे क्योंकि उनकी भारत-भक्ति, जो उनके रक्त में घुली हुई है, पाकिस्तान या भारत के किसी शत्रु के साथ हाथ मिलाने की अनुमति नहीं दे सकती। वे तथाकथित राजनीतिक व आर्थिक कारणों से भारत से पृथक् होने की बात सोच भी नहीं सकते। प्रबुद्ध वर्ग ने, घाटी के लोगों और शेष रियासत के लोगों की मानसिकता में यह जो अन्तर है उसे ठीक से नहीं आँका। इसके बिना वे समस्या का वास्तविक कारण नहीं समझ सकेंगे और न ही उसका सही समाधान पा सकेंगे।

शेख अब्दुल्ला, डॉ. फारूख और शाह के शासन-काल में भारत-विरोधी व पाकिस्तानपरस्त लोगों को प्रशासनिक तंत्र में घुसने की पूरी सुविधा मिली थी। इसका परिणाम यह हुआ कि सुरक्षा-बलों द्वारा भारत-रक्षा हेतु बनायी गयी योजनाओं की पूरी जानकारी शत्रु पक्ष के पास पहुँच जाती थी। पृथकतावादी और राष्ट्रविरोधी तत्त्वों के विरुद्ध उठाये जाने वाले पगों की सूचना उनके पास कार्यवाही होने से पहले ही पहुँच जाती है। राज्यपाल जगमोहन के शासन के दौरान ऐसे अनेक सरकारी

कर्मचारियों और अधिकारियों को रंगे हाथों पकड़ा गया था। यह रहस्य नहीं रह गया कि पाकिस्तानी सेना के सहयोग से भारत-विरोधी आतंकवादियों के प्रशिक्षण-केन्द्र पाकिस्तान में चलाये जा रहे हैं और उन्हें आधुनिक शस्त्रास्त्रों से लैस कर भारत में भेजा जा रहा है। पाकिस्तानी अखबारों में भारत के विरुद्ध 'जेहाद' के विज्ञापन छापे जा रहे हैं। पाकिस्तान से प्रशिक्षित आतंकवादी घाटी में आकर सेना और केन्द्रीय सुरक्षा-बलों पर गोलियाँ चलाते हैं। वे उनकी चौकियों व वाहनों पर आये दिन राकेटों से हमला करते हैं। १४ अगस्त १९८९ को ऐसे ही तत्त्वों ने श्रीनगर तथा घाटी के अनेक नगरों में पाकिस्तान का स्थापना-दिवस मनाया था। अगले दिन १५ अगस्त को जब भारतीय स्वाधीनता-दिवस मनाया जाता है, उन्होंने ब्लैक-आउट करके मातम मनाया था। राज्य-ध्वज तिरंगे को स्थान-स्थान पर जलाया गया था। अपहरण और फिरौती की घटनाएं आये दिन की बात हो गयी हैं। फिरौती हेतु पूरा धन न मिलने पर अपहर्तों की नृशंस हत्या करके, उनके शवों को सड़कों पर फेंक दिया जाता है। नारियों के स्तन कटे शरीर, बालकों व युवकों के आरे से चीरे गये तन, अंग-अंग काटकर उनकी बोटियाँ मोहल्लों व बाजारों में फेंकने के बाद मस्जिद के लाउडस्पीकरों से चेतावनी दी जाती है—'हिन्दुस्तानी कुत्तो ! कश्मीर छोड़ दो, नहीं तो तुम्हारा भी यही हाल होगा।' पाकिस्तान ने अपने इन एजेंटों द्वारा भारत के विरुद्ध अघोषित किन्तु योजनाबद्ध युद्ध छेड़ रखा है। युद्ध की उनकी वह योजना 'आपरेशन टोपक' (परिशिष्ट ५) के नाम से विश्व के सभी जागरूक बुद्धिजीवियों और राजनेताओं को ज्ञात है। भारत सरकार और देशवासी पाकिस्तानी इरादों को समझे बिना जम्मू-कश्मीर में उत्पन्न स्थिति पर नियंत्रण नहीं कर सकते हैं। युद्ध को युद्ध के रूप में ही लड़ना होगा।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संगठन ने स्थिति का गहराई से अध्ययन करने के पश्चात् उसका वास्तविक चित्र प्रस्तुत किया है और उसके समाधान के लिए कई ठोस सुझाव भी दिये हैं। संघ की जम्मू-कश्मीर इकाई ने अपना प्रतिनिधिमंडल दो बार देश की राजधानी में भेजा। उसने राष्ट्रपति, प्रधानमन्त्री, गृहमंत्री से लेकर देश के विभिन्न राजनीतिक दलों के पदाधिकारियों तक अर्थात् देश के राजनीतिक नेतृत्व को पूरी जानकारी दी। उसी के साथ राजधानी के सभी वरिष्ठ पत्रकारों, सम्पादकों तथा सामाजिक व धार्मिक संगठनों के लोगों से भी वे मिले। घाटी से हिन्दुओं के निकलने के खतरे और उससे होने वाले दुष्परिणामों तथा उसको समय रहते रोकने

के उपायों की विस्तृत जानकारी सबको दी गयी। संघ की राज्य इकाई ने अपने प्रतिनिधि लगभग सभी प्रदेशों में भेजकर देशवासियों को आसन्न संकट से परिचित कराने का व्यापक प्रयास भी किया। संगठन की अखिल भारतीय प्रतिनिधिसभा ने मार्च १९९० में हुई अपनी बैठक में स्थिति पर विस्तृत विचार किया और देशवासियों व सरकार के समक्ष अपने सुझावों को एक प्रस्ताव में समाहित किया है। (परिशिष्ट ६)। उस प्रस्ताव द्वारा भारत सरकार से आग्रह किया गया है कि वह घाटी की वर्तमान स्थिति को पाकिस्तान का अघोषित किन्तु पूर्ण युद्ध माने और उसका सामना युद्ध स्तर पर करने का निश्चय करे। किसी भी राष्ट्र के लिए आत्मरक्षा प्रथम वरीयता का कार्य होता है। आर्थिक उन्नति और राजनीतिक व्यवस्थाओं की ओर ध्यान देना शांतिकाल का कार्य है, न कि युद्ध के दिनों का। भारत सरकार को भी इस नियम के अनुसार अपनी वरीयता निर्धारित कर लेनी चाहिए।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने जम्मू-कश्मीर के संदर्भ में अन्तरराष्ट्रीय समीकरणों की भी समीक्षा की। उसका यह मानना है कि अन्तरराष्ट्रीय शक्तियाँ यद्यपि यह स्वर भी गुंजा रही हैं कि पाकिस्तान कश्मीर-समस्या के बारे में भारत से सीधी वार्ता करे, किन्तु उनका वास्तविक हेतु वह नहीं है जो ऊपर से दिखाई देता है। १९९० के जुलाई मास में संघ के केन्द्रीय कार्यकारी मण्डल ने एक प्रस्ताव द्वारा भारत सरकार से आग्रह किया है कि वह संबंधित पक्षों को यह बता दे कि जम्मू-कश्मीर सहित भारत का एक इंच भू-भाग भी लेन-देन की वस्तु नहीं है। (परिशिष्ट ७)

सिंहावलोकन

पूर्व-परिच्छेदों में जम्मू-कश्मीर राज्य से सम्बन्धित भारतीय राजनीति का संक्षिप्त विवरण देने का प्रयास किया गया है। उसका सार यह है कि भारत सरकार की गत ४३ वर्षों की अदूरदर्शी नीतियों के कारण भारत का नन्दन वन कश्मीर धूधू कर जल रहा है। यह जगजाहिर है कि घाटी के तथाकथित राष्ट्रवादी नेता कितने भारतनिष्ठ थे या हैं। यदि कोई कबूतर बिल्ली को देखकर अपनी आँखें बन्द कर ले, तो भले ही बिल्ली रूपी संकट उसको दिखाई न पड़े, उसका यह अर्थ नहीं होता कि बिल्ली नहीं है। यदि भारत के राजनीतिक दल कश्मीर घाटी के राष्ट्रघाती नेताओं के वास्तविक मंसूबों को न समझें और उनके ही हाथों में सत्ता सौंपकर स्वयं को और भारत को सुरक्षित अनुभव करें तो यही कहना पड़ेगा कि कबूतर के समान उन्होंने भी अपनी आँखें बन्द कर ली हैं।

देश के प्रबुद्धजन और राजनीतिक नेताओं सहित जनता-जनार्दन उसकी गहराई को समझें।

पिछले ४३ वर्षों में किये गये भारत सरकार के आत्मघाती कृत्यों और भूलों का परिणाम यह है कि –

१. घाटी की युवा पीढ़ी भावनात्मक स्तर-पर भारत के विरुद्ध हो चुकी है। उसमें से कुछ कश्मीर को पाकिस्तान में शामिल करने के पक्ष में हैं, तो अनेक उसको भारत व पाकिस्तान दोनों से अलग राज्य बनाने का सपना देख रहे हैं।

२. वह युवा पीढ़ी पाकिस्तान सरकार द्वारा दिये गये अमरीकी व चीनी शस्त्रों से लैस है और उनके प्रयोग का प्रशिक्षण पाकिस्तान में पा चुकी है। पाकिस्तान द्वारा ऐसे युवकों की भर्ती की जा रही है और उन्हें आतंक फैलाने का प्रशिक्षण दिया जा रहा है।

३. घाटी के मुस्लिम राजनीतिक नेता, चाहे वे प्रकटतः कांग्रेस से जुड़े हों या नेशनल

कान्फ्रेन्स से, प्लेबीसाइट-फ्रंट के हों या जमाते इस्लामी के या हिजबुल मुजाहिदीन अथवा जे. के. एल. एफ. के हों, मन में एक आकांक्षा रखते हैं। वे भारत के प्रति शत्रु की भूमिका निभा रहे हैं। उनमें से किसी पर भारतीय दृष्टि से भरोसा करना और उसे घाटी में राजनीति की धुरी बनाना अपने को धोखा देना है। वह वैसी ही हिमालयी भूल होगी जैसी कि शेख अब्दुल्ला या उसके लड़के फारूख या दामाद गुल मुहम्मद शाह पर भरोसा करके की गयी थी।

४. घाटी की युवा पीढ़ी में भड़का भारत-विरोधी उन्माद आर्थिक कारणों से अर्थात् बेराजगारी या औद्योगिक व व्यावसायिक विकास की धीमी गति या गरीबी के कारण नहीं है। उसका आधार इस्लामी कठमुल्लापन, असहिष्णुता और भारत-विरोध है।

५. घाटी के कुछ नेताओं व युवकों के हौसले इतने आगे बढ़ चुके हैं कि वे कश्मीर को आधार बनाकर शेष भारत पर हरा झण्डा फहराने व उसके इस्लामीकरण की खुली घोषणाएं कर रहे हैं। नेशनल कान्फ्रेन्स के प्रमुख नेता और जम्मू-कश्मीर विधान परिषद् के भूतपूर्व उपाध्यक्ष मौलाना अताउल्ला का कुछ समय पूर्व विधान-परिषद् में दिया गया भाषण उस मनोरचना का दिग्दर्शन करा देता है। अताउल्ला ने अपने भाषण में कहा था कि कश्मीरी मुसलमानों ने भारत में मिलने का फैसला इसलिए किया था कि उन्हें यहाँ रहकर भारत को इस्लामी झण्डे के नीचे लाना है।

६. राज्य के मुस्लिम नेतृत्व ने घाटी के बाहर जम्मू क्षेत्र और लद्दाख क्षेत्र में मुस्लिम जनसंख्या बढ़ाने के योजनाबद्ध प्रयास शेख अब्दुल्ला, फारूख और शाह के संरक्षण में तेजी से प्रारम्भ कर दिये थे। भारत के इस्लामीकरण के लिए वह उनका पहला पग था।

७. घाटी के हिन्दुओं को वहाँ से उजाड़ने के साथ-साथ उन्होंने लद्दाख से बौद्ध हिन्दुओं को भी भगाने की योजना बना ली है। वहाँ उसी दृष्टि से आगजनी, लूटमार, महिलाओं के अपहरण व धर्मान्तरण का सिलसिला प्रारम्भ हो चुका है। उनका अगला लक्ष्य है जम्मू-क्षेत्र। वहाँ के मन्दिरों में गोमांस फेंकना, भद्रवाह-किश्तवार क्षेत्र में बम-विस्फोट तथा हिन्दू मोहल्लों पर हमला उनके अभियान का पहला चरण है।

८. पाकिस्तान के राष्ट्राध्यक्ष गुलाम इसहाक खाँ की स्पष्ट घोषणा है कि कश्मीर के बिना पाकिस्तान-निर्माण की योजना अधूरी रह गयी है, किसी भी कीमत पर पाकिस्तान उसे लेकर रहेगा। उसकी तैयारियाँ उसी उद्देश्य को सामने रखकर चल रही हैं। सन् १९७१ की अपेक्षा पाकिस्तान का क्षेत्रफल व जनसंख्या, उसका पूर्वी भाग (बंगाल) अलग हो जाने के कारण, आधी रह गयी है, किन्तु सैन्य बल कई गुना बढ़ चुका है।

९. अमरीका व उसके सहयोगी भारत पर लगातार दबाव डाल रहे हैं कि कश्मीर समस्या को वार्ता-माध्यम से हल किया जाये। इसके दो अर्थ हैं। एक तो यह कि पाकिस्तान के अघोषित युद्ध का भारत युद्ध-स्तर पर मुकाबला न करे, और दूसरा यह कि जम्मू-कश्मीर राज्य का बँटवारा भारत स्वीकार करे और घाटी सहित अन्य मुस्लिम बहुल क्षेत्र पाकिस्तान को दे दे। जानकार सूत्रों के अनुसार भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू युद्धविराम-रेखा के आधार पर बँटवारे के लिए सहमत हो गये थे। किन्तु पाकिस्तान घाटी के बिना समझौता करने को तैयार नहीं हुआ था, इसलिए नेहरू की योजना सिरे नहीं चढ़ी। उनकी पुत्री इन्दिरा गांधी ने प्रधानमन्त्री के नाते शिमला समझौते में युद्ध-विराम रेखा को नियंत्रण-रेखा की संज्ञा देना स्वीकार करके बँटवारे की दिशा में एक पग आगे बढ़ा भी दिया था। विश्व की बड़ी शक्तियाँ उसी दिशा में आगे बढ़ने के लिए भारत पर दबाव डाल रही हैं।

१०. चीन-पाकिस्तान भारत के विरुद्ध एकजुट हैं, क्योंकि पाकिस्तान ने कश्मीर का गिलगित का एक भाग, जो सामरिक दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है, चीन को रिश्वत के रूप में दिया है। उसके बदले में चीन पाकिस्तान को सब प्रकार की सैन्य व आर्थिक सहायता दे रहा है।

११. अमरीका और रूस के बीच अब पहले जैसी तनाव की स्थिति नहीं रही है, इस कारण रूस का भारत से लगाव कम हो रहा है।

१२. सऊदी अरब, जोर्डन और ईरान व तुर्की जैसे मुस्लिम देश पाकिस्तान के साथ खुले रूप से हैं और शेष मुस्लिम देश पाकिस्तान का खुला समर्थन तो नहीं करते हैं, किन्तु अमरीका जैसे देशों के सुर में सुर मिलाकर, पाकिस्तान को अन्दर से शक्ति देते रहते हैं।

१३. अरब देशों के सहयोग से पाकिस्तान अणुबम बनाने की क्षमता अर्जित कर चुका है।

१४. पश्चिमी देशों के इशारों पर 'इण्टरनेशनल एमेनेस्टी' एवं मानवाधिकार सुरक्षा के नाम पर काम करनेवाली तथाकथित संस्थाएँ व व्यक्ति पाकिस्तानी घुसपैठियों व हस्तकों के नृशंस अत्याचारों की ओर आँख बंद रखते हुए, भारतीय सेना और राज्य-प्रशासन द्वारा की गयी सुरक्षा-व्यवस्था को बदनाम करने और उनका मनोबल तोड़ने का षड्यंत्र करते रहते हैं। स्वाभाविक ही पाकिस्तान उनको हवा-पानी देता रहता है। वह और उसके समर्थक जानते हैं कि भारतीय सेना को बदनाम कर भारतीय शासन का मनोबल तोड़े बिना जम्मू-कश्मीर को हथियाने की अभिलाषा पूरी नहीं होगी।

उपर्युक्त किसी भी बात को अनदेखा करना भारत के लिए आत्मघाती होगा। परिस्थिति से निपटने के लिए उसका सही आकलन और यथार्थवादी नीतियों का निर्धारण समय की मांग है। निम्न पग उठाना देश की अनिवार्य आवश्यकता है :–

१. संविधान की धारा ३७० को अविलंब हटाना होगा। उसके बने रहते जम्मू-कश्मीर भारत का भाग है भी और नहीं भी है। ऐसी असमंजस की स्थिति शत्रु का बल बढ़ाती है, अपना नहीं। इस धारा के समाप्त होते ही पृथक्तावादी जुनूनी गुब्बारे की हवा निकल जायेगी।

२. राज्य की सांविधानिक व्यवस्थाएँ इस प्रकार की जायें कि कश्मीर घाटी से लद्दाख व जम्मू क्षेत्र अलग इकाई हो जाये, ताकि घाटी की पृथक्तावादी लपटें जम्मू व लद्दाख को झुलसा न सकें।

३. जम्मू-कश्मीर राज्य की पूर्वोक्त संरचना बनाने के साथ ही घाटी और पाक-अधिकृत कश्मीर के बीच की उड़ी-टिटवाल पट्टी को भारत सरकार अपने नियंत्रण में रखे, जिससे पाकिस्तान की सीधी पहुँच घाटी में न हो।

४. सन् १९४७ में पाक क्षेत्र से जम्मू क्षेत्र में आये भारतीय हिन्दुओं को भारतीय नागरिकता के सभी अधिकार दिये जायें जैसे कि देश के अन्य भागों में पहुँचे हिन्दुओं को दिये गये हैं।

५. कश्मीर घाटी में सुरक्षा-व्यवस्था इतनी सक्षम बनायी जाय कि वहाँ से चले आये हिन्दू वापस जाकर शान्ति और स्वाभिमान से जीवन-यापन कर सकें और राज्य के शेष भाग के लोग भी वहाँ जाकर बस सकें। सांविधानिक व्यवस्थाओं में वे सभी सुधार किये जायें जिससे शेष भारत के लोग भी यदि चाहें तो वहाँ बस सकें और समान नागरिक अधिकार प्राप्त कर सकें।

६. जब तक घाटी में पाकिस्तान का अघोषित युद्ध जारी है, भारतीय सेना को शत्रुओं और उनके हस्तकों से निपटने के लिए उनके ठिकानों तक पीछा करने और उनके द्वारा चलाये जा रहे उग्रवादी प्रशिक्षण केन्द्रों को नष्ट करने जैसे सभी आवश्यक अधिकार दिये जायें।

७. भारत-सरकार और अन्य राज्य-सरकारों द्वारा जम्मू-कश्मीर में भेजे गये अधिकारियों व कर्मियों को एवं राज्य में स्थित गैर-सरकारी उद्योगों व प्रतिष्ठानों में कार्यरत अधिकारियों व कर्मियों को भारतीय संविधान द्वारा प्रदत्त सभी नागरिक अधिकार देश के अन्य भागों में रहने वाले नागरिकों के समान उपलब्ध हों। जम्मू-कश्मीर राज्य का कोई नियम या विधान उसमें बाधक न हो।

८. अन्यान्य राज्यों की सरकारें तथा केन्द्र सरकार जम्मू-कश्मीर में रोजगार-प्रधान उद्योग व व्यवसाय चलायें। देश के सभी भागों से लोगों को वहाँ काम करने के लिए बुलाया जाये। क्षेत्रीय आधार पर किसी के विरुद्ध पक्षपात न हो। विभिन्न सम्प्रदायों व भाषाओं के लोगों को वहाँ बसाया जाय। घाटी में भड़का सांप्रदायिक उन्माद व पृथक्तावाद तभी नियंत्रित हो सकेगा और उसके स्थान पर भावनात्मक एकता व सहिष्णुता पुष्ट होगी।

९. वैसे तो पूरे राज्य में, किन्तु घाटी व नियंत्रण-रेखा के पास के क्षेत्र में विशेषकर, जहाँ इस्लामी पृथक्तावाद सिर उठा रहा है, अवकाश-प्राप्त व कार्यरत सैनिकों के परिवारों को चल-अचल सम्पत्ति खरीदने व बनाने तथा काम-धन्धा प्रारम्भ करने की सुविधाएं दी जायें।

१०. गुप्तचर विभाग, पुलिस प्रशासन, न्यायिक प्रशासन में कार्यरत लोगों की विशेष जाँच की जाये और पाक-परस्त तथा भारत-विरोधी तत्त्वों को नौकरी से बाहर किया जाये तथा उनके स्थान पर भारत के प्रति निष्ठावान् लोगों को नियुक्त किया जाये।

११. मजहबी जुनून और उसके आधार पर पृथक्तावाद भड़काने वाले मकतबों तथा सामाजिक-साम्प्रदायिक संस्थाओं पर प्रतिबंध लगाया जाये। साम्प्रदायिक समभाव और राष्ट्र-भक्ति की शिक्षा देने वाले विद्यालयों को बड़ी संख्या में प्रारम्भ किया जाय। उन शिक्षा-केन्द्रों में औपचारिक शिक्षा के साथ व्यावसायिक शिक्षा पर भी पूरा बल दिया जाय। शिक्षकों की नियुक्ति से पूर्व उनकी मनोरचना के बारे में ठीक जाँच-पड़ताल की जाय और संदिग्ध निष्ठा वाले तत्त्वों को शिक्षा विभाग में प्रवेश न दिया जाय।

१२. जम्मू-कश्मीर राज्य में, विशेषकर घाटी में, स्थानीय निकायों से लेकर विधान-सभा व संसद् तक के चुनावों को तब तक स्थगित रखा जाय, जब तक कि क्षेत्र में पाकिस्तानी तत्त्वों एवं आतंकवादियों की गतिविधियाँ जारी हैं। लोकतंत्र की दुहाई देने वाले तथाकथित मानवाधिकारवादियों की चिल्लपों से विचलित न होते हुए 'पहले राष्ट्र-रक्षा, फिर और कुछ' के सिद्धान्त पर अडिग रहना होगा। सतर्क रहना होगा कि राष्ट्रघाती तत्त्व किसी भी माध्यम से – युद्ध अथवा लोकतांत्रिक प्रक्रिया से – सिर न उठा सकें। इस दृष्टि से संविधान और चुनाव-नियमावली में संशोधन करना हो, तो कर लेना चाहिए।

समस्त देशवासियों, विशेषकर जम्मू-कश्मीर के नागरिकों को बहुत सतर्क रहना चाहिए कि राज्य में कभी ऐसे व्यक्तियों को बढ़ावा न मिले जिनकी निष्ठाएँ संदिग्ध हों। राज्य की स्थिति इतनी सामान्य बनानी होगी कि विस्थापित लोग अपने क्षेत्रों को वापस हो सकें और महाराजा हरिसिंह, प्रेमनाथ डोगरा, मेहरचन्द महाजन, बख्शी गुलाम मुहम्मद और जी. एम. सादिक जैसे राष्ट्रवादी नायक उभर सकें। जब तक यह सम्भव न हो, राज्य का प्रशासन जगमोहन जैसे कुशल प्रशासक, सम्प्रदाय-निरपेक्ष व न्यायसम्मत व्यवस्था देने वाले प्रतिभाशाली व्यक्ति को सौंपना चाहिए। राष्ट्र में ऐसे अनुभवी प्रशासकों का अभाव नहीं है जो कुर्सी के बजाय राष्ट्र-हित को वरीयता देंगे। देशवासियों का कर्तव्य है कि ऐसे व्यक्तियों को खुला समर्थन दें और एक ऐसे राजनीतिक वातावरण का निर्माण करें, जिसमें भारत में 'एक प्रधान, एक विधान और एक निशान' की अवधारणा को कोई चुनौती न दे सके और भारत अखंड रहे।

५. कश्मीर घाटी में सुरक्षा-व्यवस्था इतनी सक्षम बनायी जाय कि वहाँ से चले आये हिन्दू वापस जाकर शान्ति और स्वाभिमान से जीवन-यापन कर सकें और राज्य के शेष भाग के लोग भी वहाँ जाकर बस सकें। सांविधानिक व्यवस्थाओं में वे सभी सुधार किये जायें जिससे शेष भारत के लोग भी यदि चाहें तो वहाँ बस सकें और समान नागरिक अधिकार प्राप्त कर सकें।

६. जब तक घाटी में पाकिस्तान का अघोषित युद्ध जारी है, भारतीय सेना को शत्रुओं और उनके हस्तकों से निपटने के लिए उनके ठिकानों तक पीछा करने और उनके द्वारा चलाये जा रहे उग्रवादी प्रशिक्षण केन्द्रों को नष्ट करने जैसे सभी आवश्यक अधिकार दिये जायें।

७. भारत-सरकार और अन्य राज्य-सरकारों द्वारा जम्मू-कश्मीर में भेजे गये अधिकारियों व कर्मियों को एवं राज्य में स्थित गैर-सरकारी उद्योगों व प्रतिष्ठानों में कार्यरत अधिकारियों व कर्मियों को भारतीय संविधान द्वारा प्रदत्त सभी नागरिक अधिकार देश के अन्य भागों में रहने वाले नागरिकों के समान उपलब्ध हों। जम्मू-कश्मीर राज्य का कोई नियम या विधान उसमें बाधक न हो।

८. अन्यान्य राज्यों की सरकारें तथा केन्द्र सरकार जम्मू-कश्मीर में रोजगार-प्रधान उद्योग व व्यवसाय चलायें। देश के सभी भागों से लोगों को वहाँ काम करने के लिए बुलाया जाये। क्षेत्रीय आधार पर किसी के विरुद्ध पक्षपात न हो। विभिन्न सम्प्रदायों व भाषाओं के लोगों को वहाँ बसाया जाय। घाटी में भड़का सांप्रदायिक उन्माद व पृथक्तावाद तभी नियंत्रित हो सकेगा और उसके स्थान पर भावनात्मक एकता व सहिष्णुता पुष्ट होगी।

९. वैसे तो पूरे राज्य में, किन्तु घाटी व नियंत्रण-रेखा के पास के क्षेत्र में विशेषकर, जहाँ इस्लामी पृथक्तावाद सिर उठा रहा है, अवकाश-प्राप्त व कार्यरत सैनिकों के परिवारों को चल-अचल सम्पत्ति खरीदने व बनाने तथा काम-धन्धा प्रारम्भ करने की सुविधाएं दी जायें।

१०. गुप्तचर विभाग, पुलिस प्रशासन, न्यायिक प्रशासन में कार्यरत लोगों की विशेष जाँच की जाये और पाक-परस्त तथा भारत-विरोधी तत्त्वों को नौकरी से बाहर किया जाये तथा उनके स्थान पर भारत के प्रति निष्ठावान् लोगों को नियुक्त किया जाये।

११. मजहबी जुनून और उसके आधार पर पृथक्तावाद भड़काने वाले मकतबों तथा सामाजिक-साम्प्रदायिक संस्थाओं पर प्रतिबंध लगाया जाये। साम्प्रदायिक समभाव और राष्ट्र-भक्ति की शिक्षा देने वाले विद्यालयों को बड़ी संख्या में प्रारम्भ किया जाय। उन शिक्षा-केन्द्रों में औपचारिक शिक्षा के साथ व्यावसायिक शिक्षा पर भी पूरा बल दिया जाय। शिक्षकों की नियुक्ति से पूर्व उनकी मनोरचना के बारे में ठीक जाँच-पड़ताल की जाय और संदिग्ध निष्ठा वाले तत्त्वों को शिक्षा विभाग में प्रवेश न दिया जाय।

१२. जम्मू-कश्मीर राज्य में, विशेषकर घाटी में, स्थानीय निकायों से लेकर विधान-सभा व संसद् तक के चुनावों को तब तक स्थगित रखा जाय, जब तक कि क्षेत्र में पाकिस्तानी तत्त्वों एवं आतंकवादियों की गतिविधियाँ जारी हैं। लोकतंत्र की दुहाई देने वाले तथाकथित मानवाधिकारवादियों की चिल्लपों से विचलित न होते हुए 'पहले राष्ट्र-रक्षा, फिर और कुछ' के सिद्धान्त पर अडिग रहना होगा। सतर्क रहना होगा कि राष्ट्रघाती तत्त्व किसी भी माध्यम से – युद्ध अथवा लोकतांत्रिक प्रक्रिया से – सिर न उठा सकें। इस दृष्टि से संविधान और चुनाव-नियमावली में संशोधन करना हो, तो कर लेना चाहिए।

समस्त देशवासियों, विशेषकर जम्मू-कश्मीर के नागरिकों को बहुत सतर्क रहना चाहिए कि राज्य में कभी ऐसे व्यक्तियों को बढ़ावा न मिले जिनकी निष्ठाएँ संदिग्ध हों। राज्य की स्थिति इतनी सामान्य बनानी होगी कि विस्थापित लोग अपने क्षेत्रों को वापस हो सकें और महाराजा हरिसिंह, प्रेमनाथ डोगरा, मेहरचन्द महाजन, बख्शी गुलाम मुहम्मद और जी. एम. सादिक जैसे राष्ट्रवादी नायक उभर सकें। जब तक यह सम्भव न हो, राज्य का प्रशासन जगमोहन जैसे कुशल प्रशासक, सम्प्रदाय-निरपेक्ष व न्यायसम्मत व्यवस्था देने वाले प्रतिभाशाली व्यक्ति को सौंपना चाहिए। राष्ट्र में ऐसे अनुभवी प्रशासकों का अभाव नहीं है जो कुर्सी के बजाय राष्ट्र-हित को वरीयता देंगे। देशवासियों का कर्तव्य है कि ऐसे व्यक्तियों को खुला समर्थन दें और एक ऐसे राजनीतिक वातावरण का निर्माण करें, जिसमें भारत में 'एक प्रधान, एक विधान और एक निशान' की अवधारणा को कोई चुनौती न दे सके और भारत अखंड रहे।

परिशिष्ट

परिशिष्ट—१ : महाराजा का भारत में विलय का प्रस्ताव

(जम्मू-कश्मीर के महाराजा हरि सिंह द्वारा भारत के गवर्नर जनरल लार्ड माउण्टबैटन को २६ अक्टूबर १९४७ को लिखा गया पत्र)

प्रिय माउण्टबैटन,

मैं महामहिम को अवगत कराना चाहता हूँ कि मेरे राज्य में गंभीर आपात स्थिति उत्पन्न हो गयी है तथा मैं आपकी सरकार से त्वरित सहायता के लिए प्रार्थना करता हूँ।

महामहिम जानते ही हैं कि जम्मू-कश्मीर राज्य का भारत या पाकिस्तान किसी भी अधिराज्य (डोमिनियन) में विलय नहीं हुआ है। भौगोलिक दृष्टि से मेरा राज्य दोनों अधिराज्यों से संलग्न है। इसके दोनों के साथ अत्यावश्यक आर्थिक व सांस्कृतिक संबंध हैं। इसके अतिरिक्त सोवियत संघ और चीन के साथ मेरे राज्य की संयुक्त सीमा है। भारत व पाकिस्तान दोनों अधिराज्य अपने वैदेशिक संबंधों में इस तथ्य की उपेक्षा नहीं कर सकते।

मैं यह निश्चय करने के लिए समय चाहता था कि मैं किस अधिराज्य में सम्मिलित होऊँ अथवा क्या दोनों के ही साथ मित्रता और सौहार्दपूर्ण संबंध बनाये रखते हुए (मेरे राज्य का) स्वतंत्र रहना दोनों अधिराज्यों और मेरे राज्य के सर्वोत्तम हित में नहीं है ?

इसी दृष्टि से मैंने दोनों अधिराज्यों को मेरे राज्य के साथ 'यथास्थिति संधि' करने के लिए कहा था। पाकिस्तान सरकार ने इस संधि को स्वीकार कर लिया। भारत अधिराज्य ने मेरी सरकार के प्रतिनिधि के साथ और वार्ता करने की इच्छा व्यक्त की थी। नीचे इंगित घटनाओं को देखते हुए मैं इसकी व्यवस्था नहीं कर पाया। वास्तव में पाकिस्तान सरकार (मेरे) राज्य में डाक व तार व्यवस्था का संचालन कर रही है।

यद्यपि पाकिस्तान सरकार के साथ हमारी यथास्थिति विराम-संधि है, फिर भी उस सरकार ने मेरे राज्य के लिए भोजन, नमक व पेट्रोल जैसी वस्तुओं की आपूर्ति को निरन्तर और उत्तरोत्तर अधिक से अधिक अवरुद्ध करने की अनुमति दी।

आधुनिक शस्त्रों से सज्जित घुसपैठियों, सादी वेशभूषा में सैनिकों और आततायियों को राज्य में पहले पुंछ, फिर सियालकोट और अंततः हजारा जिले से जुड़े रामकोट की ओर के क्षेत्र में घुसपैठ करने की अनुमति दी गयी है। परिणामस्वरूप राज्य के पास जो सीमित सेना थी उसको छितरा देना पड़ा और इस प्रकार एक ही साथ अनेक केन्द्रों पर शत्रु का सामना करना पड़ा। इससे वहाँ जान-माल के भारी विनाश व लूटमार को रोकना कठिन हो गया है। महोरा विद्युत् उत्पादन गृह, जिससे सम्पूर्ण श्रीनगर-में बिजली की आपूर्ति होती है, जला दिया गया। भारी संख्या में महिलाओं के अपहरण व बलात्कार की घटनाओं ने मेरा हृदय चीर दिया है। इस प्रकार राज्य पर टूट पड़ी ये बर्बर जंगली फौजें संपूर्ण राज्य पर अधिकार करने की दृष्टि से पहले मेरी सरकार की ग्रीष्मकालीन राजधानी श्रीनगर पर कब्जा करने के उद्देश्य से आगे बढ़ रही हैं।

मानसहरा-मुजफ्फराबाद मार्ग से लगातार ट्रकों द्वारा उत्तर-पश्चिम सीमा प्रान्त के सुदूर क्षेत्रों से लाये गये कबाइलियों की व्यापक स्तर पर घुसपैठ और उनका नवीनतम हथियारों से लैस होना उत्तर-पश्चिम सीमा प्रान्त की प्रान्तीय सरकार व पाकिस्तान सरकार की जानकारी के बिना संभव नहीं है। मेरी सरकार द्वारा बार-बार निवेदन किये जाने के बावजूद इन छापामारों को नियंत्रित करने या मेरे राज्य में घुसने से रोकने के लिए कोई प्रयास नहीं किये गये। पाकिस्तान रेडियो ने तो यह कहानी भी फैलायी कि कश्मीर में एक अस्थायी सरकार स्थापित हो चुकी है। मेरे राज्य की सामान्यतः मुस्लिम या गैर-मुस्लिम जनता ने इसमें किसी भी प्रकार भाग नहीं लिया है।

इस समय मेरे राज्य में उत्पन्न परिस्थिति और गम्भीर आपात स्थिति को देखते हुए मेरे पास भारतीय अधिराज्य से सहायता माँगने के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं है। स्वाभाविक है कि मेरे राज्य का भारतीय अधिराज्य में विलय हुए बिना मेरे द्वारा माँगी गयी सहायता वे नहीं भेज सकते। तदनुसार मैंने ऐसा करने का निश्चय कर लिया है, और मैं आपकी सरकार की स्वीकृति के लिए विलय-पत्र संलग्न कर रहा हूँ। दूसरा विकल्प यह हो सकता है कि अपने राज्य व जनता को लुटेरों के

हवाले छोड़ दूँ। जब तक मैं इस राज्य का शासक हूँ और अपने देश की रक्षा हेतु जीवित हूँ, इस विकल्प को कदापि घटित नहीं होने दूंगा।

मैं महामहिम की सरकार को यह भी सूचित कर दूँ कि मैं तुरन्त एक अंतरिम सरकार स्थापित करने और इस आपातकाल में शेख अब्दुल्ला से यह कहने का इच्छुक हूँ कि वे मेरे प्रधानमंत्री के साथ मिलकर राज्य के उत्तरदायित्वों को निभायें।

यदि मेरे राज्य को बचाना है, तो श्रीनगर को तुरन्त सहायता प्राप्त होनी चाहिए। श्री मेनन इस स्थिति से पूर्णतः अवगत हैं, यदि और व्याख्या की आवश्यकता हुई तो वे आपको बतायेंगे।

शीघ्रता में हार्दिक सम्मान के साथ,

भवदीय,

हरि सिंह

जम्मू प्रासाद,

२६ अक्टूबर १९४७

परिशिष्ट - २

२६ अक्टूबर १९४७ को महाराजा हरिसिंह द्वारा कार्यान्वित विलय-पत्र

क्योंकि भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम १९४७ प्रावधान करता है कि अगस्त १९४७ के पन्द्रहवें दिन से एक स्वतन्त्र अधिराज्य 'भारत' की स्थापना होगी तथा गर्वनर जनरल के आदेश द्वारा यथानिर्दिष्ट कुछ छोड़कर, जोड़कर, आत्मसात् कर या संशोधन कर भारत शासन अधिनियम, १९३५ भारत अधिराज्य में लागू होगा।

तथा क्योंकि गवर्नर द्वारा अंगीकृत भारत शासन अधिनियम १९३५ प्रावधान करता है कि भारतीय राज्य अपने शासक द्वारा कार्यान्वित विलय-पत्र के द्वारा भारतीय अधिराज्य में शामिल हो सकते हैं।

अतः अब मैं श्रीमान् इंद्रमहेन्द्र राजराजेश्वर महाराजाधिराज श्री हरिसिंह जी जम्मू एवं कश्मीर नरेश तथा तिब्बत आदि देशाधिपति, जम्मू-कश्मीर राज्य का शासक, अपने उक्त राज्य में तथा उसके ऊपर अपनी सम्प्रभुता का उपयोग करते हुए एतद्द्वारा भारत अधिराज्य में विलय हेतु अपने इस लिखित विलय-पत्र को कार्यान्वित करता हूँ तथा

१. मैं एतद्द्वारा घोषित करता हूँ कि मैं भारत अधिराज्य में इस उद्देश्य से सम्मिलित होता हूँ कि भारत के गवर्नर जनरल, अधिराज्य का विधानमंडल, संघीय न्यायालय, और अधिराज्य के प्रयोजनों से स्थापित अन्य कोई भी अधिराज्यीय अधिकरण, मेरे इस विलय-पत्र के आधार पर किन्तु सदैव इसमें विद्यमान आबन्धों के अनुसार, और केवल अधिराज्य के प्रयोजनों से ही, जम्मू-कश्मीर राज्य के सम्बन्ध में (जिसका उल्लेख इसके पश्चात् 'यह राज्य' कहकर किया जायेगा) कार्यों का निष्पादन करेंगे जो १५ अगस्त १९४७ को भारत अधिराज्य में लागू हुए रूप में भारत शासन अधिनियम १९३५ के द्वारा या उसके अन्तर्गत उनमें निहित हों।

२. मैं एतद्द्वारा यह आश्वासन देने का दायित्व स्वीकार करता हूँ कि इस राज्य में अधिनियम के प्रावधानों को प्रभावी रूप में लागू किया जायेगा जहाँ तक वे मेरे विलय-पत्र के आधार पर यहाँ लागू हो सकते होंगे।

३. मैं अनुसूची में दिये गये विषयों को उन विषयों के समान ही स्वीकार करता हूँ, जिनके बारे में अधिराज्यीय विधानमंडल इस राज्य के लिए कानून बना सकता है।

४. में इस आश्वासन पर भारतीय गणराज्य में विलय करने की घोषणा करता हूँ कि यदि गवर्नर जनरल और राज्य के शासक के मध्य कोई समझौता होता है जिससे अधिराज्य के विधानमंडल के किसी विधान के अंतर्गत राज्य के प्रशासन से संबंधित कोई भी कार्य राज्य के शासक द्वारा किया जायेगा, तब ऐसा कोई भी समझौता इस विलय-पत्र का भाग बना माना जायेगा और तदनुसार भावित एवं प्रभावी होगा।

५. मेरे इस विलय-पत्र की शर्तें भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम, १९४७ के किसी संशोधन द्वारा परिवर्तित नहीं की जायेंगी, जब तक कि मैं ऐसे संशोधन को इस विलय-पत्र के पूरक के रूप में स्वीकार नहीं करता।

६. यह विलय-पत्र अधिराज्य के विधानमंडल को किसी भी उद्देश्य के लिए भूमि के अनिवार्य अधिग्रहण के लिए कानून बनाने की शक्ति नहीं देता है, परन्तु मैं यह घोषणा करता हूँ कि यदि अधिराज्य इस राज्य में लागू होने वाले अधिराज्य के कानून के अंतर्गत किसी भूमि की प्राप्ति आवश्यक मानेगा तो मैं उनके निवेदन पर, उनके खर्च पर भूमि का अधिग्रहण करूंगा और यदि भूमि मेरी है तो मैं उस भूमि को मान्य शर्तों पर अथवा किसी समझौते के अभाव में भारत के मुख्य न्यायाधीश द्वारा नियुक्त किसी मध्यस्थ द्वारा निर्धारित शर्तों पर हस्तान्तरित कर दूंगा।

७. भारत के किसी भावी संविधान को किसी भी रूप में स्वीकार करने का वचन देने अथवा ऐसे किसी भावी संविधान के अन्तर्गत भारत सरकार के साथ कोई ऐसा समझौता करने के मेरे स्वविवेक की शक्ति को नियन्त्रित करने वाली किसी भी प्रकार की प्रतिबद्धता इस विलय-पत्र में शामिल नहीं है।

८. इस विलय-पत्र में ऐसा कुछ नहीं है, जो इस राज्य में व इस पर मेरी संप्रभुता की निरन्तरता, अथवा इस विलय-पत्र के द्वारा या इसके अन्तर्गत किये गये प्रावधानों के अतिरिक्त राज्य के शासक के रूप में मेरे द्वारा अभी प्रयोग की जा रही शक्तियों, सत्ता या अधिकारों के सम्पादन अथवा राज्य में इस समय विद्यमान किसी विधान की वैधता को प्रभावित करता हो।

९. मैं एतद्द्वारा यह घोषणा करता हूँ कि मैं इस राज्य की ओर से इस विलय-पत्र का क्रियान्वयन करता हूँ, तथा इस प्रपत्र में मेरे या इस राज्य के शासक के किसी भी उल्लेख में मेरे वारिसों व उत्तराधिकारियों का उल्लेख भी अभिप्रेत है।

२६ अक्टूबर १९४७ को मेरे द्वारा दिया गया।

हरिसिंह

जम्मू-कश्मीर के महाराजाधिराज

भारत के गवर्नर जनरल द्वारा विलय की स्वीकृति

मैं एतद्द्वारा इस विलय-पत्र को स्वीकार करता हूँ।

दिनांक अक्टूबर उन्नीस सौ सैंतालीस का यह सत्ताईसवाँ दिन। (२७ अक्टूबर १९४७)

बर्मा के माउण्टबैटन

भारत के गवर्नर जनरल

परिशिष्ट - ३

सरदार पटेल को महाराजा हरिसिंह का पत्र

३१ जनवरी १९४८ को जम्मू-कश्मीर के महाराजा हरिसिंह ने केन्द्रीय गृहमंत्री एवं उपप्रधानमंत्री सरदार वल्लभभाई पटेल के नाम एक गोपनीय पत्र भेजा। जम्मू-कश्मीर राज्य की तत्कालीन राजनीतिक और सैनिक स्थिति पर प्रकाश डालने के बाद महाराजा ने उस ऐतिहासिक पत्र में लिखा –

"ऊपर बतायी गयी स्थिति के परिप्रेक्ष्य में मेरे मन में विचार उठते हैं कि मैं इसके सम्बन्ध में अपनी प्रतिक्रिया आपके सामने स्पष्ट रूप में रख दूँ। कभी-कभी मुझे लगता है कि अच्छा होगा कि मैं अपनी रियासत के भारत के साथ विलय को समाप्त कर दूँ। भारत सरकार ने रियासत के विलय को अभी तक अन्तिम रूप में स्वीकार नहीं किया है। यदि वह रियासत की उस धरती को, जिस पर पाकिस्तान ने बलात् अधिकार कर लिया है, मुक्त नहीं कर सकती और राष्ट्र संघ के जनमत सम्बन्धी प्रस्ताव को कार्यरूप देने की स्थिति में रियासत को पाकिस्तान के हवाले करती है, तब रियासत के भारत के साथ विलय के साथ बँधे रहने का कोई औचित्य नहीं है। इस समय शायद पाकिस्तान से बात करनी लाभप्रद हो। परन्तु अन्ततोगत्वा पाकिस्तान में मिलने से न मेरा राज रहेगा और न रियासत में कोई हिन्दू और सिख बचेगा। दूसरा विकल्प यह है कि विलय का प्रस्ताव वापस ले लूँ। ऐसा करने से संयुक्त राष्ट्र संघ का कश्मीर के मामले में हस्तक्षेप अपने आप समाप्त हो जायेगा, क्योंकि यदि विलय समाप्त कर दिया जाता है तो भारत सरकार का मेरे राज्य के विषय में कुछ कहने-करने का अधिकार स्वतः समाप्त हो जायेगा। इसका परिणाम यह होगा कि रियासत विलय के पूर्व की स्थिति में आ जायेगी। इस स्थिति की कठिनाई यह होगी कि तब कश्मीर में भारत की सेना नहीं रह सकेगी। जो भारतीय सैनिक रहेंगे वे स्वयंसेवी सहयोगी के रूप में रहेंगे। इस हालत में मैं अपनी सेना और भारतीय सेना के स्वयंसेवकों का नेतृत्व संभालने को तैयार हूँ। मुझे युद्ध का अनुभव है, अपनी वर्तमान असहाय स्थिति से मैं अपनी धरती व प्रजा की रक्षा के लिए लड़ते हुए मरना बेहतर समझता हूँ।

"जहाँ तक आन्तरिक राजनीतिक स्थिति का प्रश्न है, मैं अपने राज्य का सांविधानिक प्रमुख रहने को तैयार हूँ। परन्तु मैं नेशनल कान्फ्रेंस के नेताओं के काम से सन्तुष्ट नहीं हूँ। उन्हें हिन्दू-सिखों का ही नहीं अपितु बहुत से मुसलमानों का भी विश्वास प्राप्त नहीं है। इसलिए आवश्यक है कि कुछ सुरक्षित अधिकार मेरे हाथ में रहें। मैं यह भी चाहूंगा कि मैं अपनी मर्जी का दीवान नियुक्त कर सकूँ। वह राज्य के मन्त्रिमण्डल के सदस्य और सम्भव हो तो इसके अध्यक्ष के रूप में काम करे।

"मेरे सामने एक अन्य विकल्प यह है कि मैं राजा के नाते अपना अधिकार न छोड़ते हुए रियासत के बाहर जाकर रहूँ ताकि मेरी प्रजा को मुझसे कुछ अपेक्षा न रहे। मैं यह समझ सकता हूँ कि जिस प्रकार श्री मेनन की सलाह से मेरे कश्मीर से आने की भी कुछ लोगों ने यह कहकर आलोचना की थी कि मैं कश्मीर से भाग आया, कुछ लोग यह आलोचना करेंगे कि मैं उन्हें उनके रहम पर छोड़कर जम्मू से बाहर चला गया। परन्तु केवल आलोचना के डर से ऐसी जगह बने रहना, जहाँ कोई कुछ नहीं कर सकता, मुझे ठीक नहीं लगता।

"तीसरा विकल्प यह है कि भारत सरकार सैनिक-क्षेत्र में अपनी जिम्मेदारी को प्रामाणिकता के साथ निभाये और पूरी शक्ति लगाकर राज्य से पाकिस्तानी आक्रान्ताओं और विद्रोहियों का सफाया करे। यह समझकर चलना चाहिए कि कश्मीर के मामले में सैनिक दृष्टि से पाकिस्तान बेहतर स्थिति में है। ज्योंही बरफ पिघलेगी वह कश्मीर घाटी पर सब तरफ से हल्ला बोलेगा, और लद्दाख को भी अपने अधिकार में ले लेगा। इसलिए आवश्यक है कि भारत सरकार सैनिक स्तर पर प्रभावी ढंग से सक्रिय हो। अन्यथा मुझे पहले दो विकल्पों में से एक को अपनाने के लिए बाध्य होना पड़ेगा।"

(इस पत्र का तत्काल कुछ प्रभाव पड़ा। लद्दाख को बचाने के लिए प्रभावी प्रयास किया गया। परन्तु मीरपुर, मुजफ्फराबाद, गिलगित और बलतिस्तान क्षेत्रों से पाकिस्तानियों को खदेड़ने के लिए कोई विशेष पग नहीं उठाये गये। केवल बलतिस्तान का कारगिल नगर और कारगिल तहसील, जिसका बड़ा भाग लद्दाख के राजा के अधिकार में था, बचाये जा सके।)

परिशिष्ट - ३

सरदार पटेल को महाराजा हरिसिंह का पत्र

३१ जनवरी १९४८ को जम्मू-कश्मीर के महाराजा हरिसिंह ने केन्द्रीय गृहमंत्री एवं उपप्रधानमंत्री सरदार वल्लभभाई पटेल के नाम एक गोपनीय पत्र भेजा। जम्मू-कश्मीर राज्य की तत्कालीन राजनीतिक और सैनिक स्थिति पर प्रकाश डालने के बाद महाराजा ने उस ऐतिहासिक पत्र में लिखा –

"ऊपर बतायी गयी स्थिति के परिप्रेक्ष्य में मेरे मन में विचार उठते हैं कि मैं इसके सम्बन्ध में अपनी प्रतिक्रिया आपके सामने स्पष्ट रूप में रख दूँ। कभी-कभी मुझे लगता है कि अच्छा होगा कि मैं अपनी रियासत के भारत के साथ विलय को समाप्त कर दूँ। भारत सरकार ने रियासत के विलय को अभी तक अन्तिम रूप में स्वीकार नहीं किया है। यदि वह रियासत की उस धरती को, जिस पर पाकिस्तान ने बलात् अधिकार कर लिया है, मुक्त नहीं कर सकती और राष्ट्र संघ के जनमत सम्बन्धी प्रस्ताव को क्रियारूप देने की स्थिति में रियासत को पाकिस्तान के हवाले करती है, तब रियासत के भारत के साथ विलय के साथ बँधे रहने का कोई औचित्य नहीं है। इस समय शायद पाकिस्तान से बात करनी लाभप्रद हो। परन्तु अन्ततोगत्वा पाकिस्तान में मिलने से न मेरा राज रहेगा और न रियासत में कोई हिन्दू और सिख बचेगा। दूसरा विकल्प यह है कि विलय का प्रस्ताव वापस ले लूँ। ऐसा करने से संयुक्त राष्ट्र संघ का कश्मीर के मामले में हस्तक्षेप अपने आप समाप्त हो जायेगा, क्योंकि यदि विलय समाप्त कर दिया जाता है तो भारत सरकार का मेरे राज्य के विषय में कुछ कहने-करने का अधिकार स्वतः समाप्त हो जायेगा। इसका परिणाम यह होगा कि रियासत विलय के पूर्व की स्थिति में आ जायेगी। इस स्थिति की कठिनाई यह होगी कि तब कश्मीर में भारत की सेना नहीं रह सकेगी। जो भारतीय सैनिक रहेंगे वे स्वयंसेवी सहयोगी के रूप में रहेंगे। इस हालत में मैं अपनी सेना और भारतीय सेना के स्वयंसेवकों का नेतृत्व संभालने को तैयार हूँ। मुझे युद्ध का अनुभव है, अपनी वर्तमान असहाय स्थिति से मैं अपनी धरती व प्रजा की रक्षा के लिए लड़ते हुए मरना बेहतर समझता हूँ।

"जहाँ तक आन्तरिक राजनीतिक स्थिति का प्रश्न है, मैं अपने राज्य का सांविधानिक प्रमुख रहने को तैयार हूँ। परन्तु मैं नेशनल कान्फ्रेंस के नेताओं के काम से सन्तुष्ट नहीं हूँ। उन्हें हिन्दू-सिखों का ही नहीं अपितु बहुत से मुसलमानों का भी विश्वास प्राप्त नहीं है। इसलिए आवश्यक है कि कुछ सुरक्षित अधिकार मेरे हाथ में रहें। मैं यह भी चाहूंगा कि मैं अपनी मर्जी का दीवान नियुक्त कर सकूँ। वह राज्य के मन्त्रिमण्डल के सदस्य और सम्भव हो तो इसके अध्यक्ष के रूप में काम करे।

"मेरे सामने एक अन्य विकल्प यह है कि मैं राजा के नाते अपना अधिकार न छोड़ते हुए रियासत के बाहर जाकर रहूँ ताकि मेरी प्रजा को मुझसे कुछ अपेक्षा न रहे। मैं यह समझ सकता हूँ कि जिस प्रकार श्री मेनन की सलाह से मेरे कश्मीर से आने की भी कुछ लोगों ने यह कहकर आलोचना की थी कि मैं कश्मीर से भाग आया, कुछ लोग यह आलोचना करेंगे कि मैं उन्हें उनके रहम पर छोड़कर जम्मू से बाहर चला गया। परन्तु केवल आलोचना के डर से ऐसी जगह बने रहना, जहाँ कोई कुछ नहीं कर सकता, मुझे ठीक नहीं लगता।

"तीसरा विकल्प यह है कि भारत सरकार सैनिक-क्षेत्र में अपनी जिम्मेदारी को प्रामाणिकता के साथ निभाये और पूरी शक्ति लगाकर राज्य से पाकिस्तानी आक्रान्ताओं और विद्रोहियों का सफाया करे। यह समझकर चलना चाहिए कि कश्मीर के मामले में सैनिक दृष्टि से पाकिस्तान बेहतर स्थिति में है। ज्योंही बरफ पिघलेगी वह कश्मीर घाटी पर सब तरफ से हल्ला बोलेगा, और लद्दाख को भी अपने अधिकार में ले लेगा। इसलिए आवश्यक है कि भारत सरकार सैनिक स्तर पर प्रभावी ढंग से सक्रिय हो। अन्यथा मुझे पहले दो विकल्पों में से एक को अपनाने के लिए बाध्य होना पड़ेगा।"

(इस पत्र का तत्काल कुछ प्रभाव पड़ा। लद्दाख को बचाने के लिए प्रभावी प्रयास किया गया। परन्तु मीरपुर, मुजफ्फराबाद, गिलगित और बलतिस्तान क्षेत्रों से पाकिस्तानियों को खदेड़ने के लिए कोई विशेष पग नहीं उठाये गये। केवल बलतिस्तान का कारगिल नगर और कारगिल तहसील, जिसका बड़ा भाग लद्दाख के राजा के अधिकार में था, बचाये जा सके।)

परिशिष्ट-४

मेहरचंद महाजन द्वारा सरदार पटेल को शेख के संबध में लिखा गया पत्र

जम्मू
२४ दिसम्बर, १९४७

आदरणीय सरदार पटेल जी,

शेख अब्दुल्ला द्वारा महामान्य (महाराजा कश्मीर) को लिखे गये पत्र के २० तारीख को प्रकाशित होने से पहले ही उसकी एक प्रतिलिपि मैंने आपको भेजी थी। मुझे आश्चर्य है कि उक्त पत्र की प्रतिलिपि आपको क्यों नहीं मिली ? मैं उसी पत्र की एक और प्रतिलिपि आपकी सेवा में भेज रहा हूँ।

यह निरीह प्रजाजन (शेख अब्दुल्ला) जिसने महामान्य महाराजा कश्मीर के प्रति असंदिग्ध निष्ठा का अभिवचन दिया था अब उन पर जन-अदालत के सम्मुख मुकदमा चलाना चाहता है और उनसे पदत्याग करने की माँग कर रहा है। उसका नवीनतम दृष्टिकोण यह है कि महामान्य महाराजा कश्मीर अधिक से अधिक जम्मू, कठुआ और ऊधमपुर के जिले अपने पास रखकर रियासत के शेष भूभाग को पाकिस्तान सरीखे मुस्लिम गणराज्य को सौंप दें। अब वह जेल में बन्द मुस्लिम कान्फ्रेंस के नेता अब्बास के साथ भेंट करके अपने इस प्रस्ताव पर उसका समर्थन प्राप्त करने का प्रयास कर रहा है।

सच पूछा जाये तो शेख अब्दुल्ला अब सभी प्रकार से महामान्य महाराजा कश्मीर की खुली अवज्ञा कर रहा है और अपनी बढ़ती हुई साम्प्रदायिक मनोवृत्ति का रोज परिचय दे रहा है।

यदि आपकी अनुमति हो तो मैं आपके समक्ष शेख की प्रशासनिक क्षमता, दक्षता, साम्प्रदायिक मनोवृत्तियों से संबंधित घटनाओं और महामान्य महाराजा कश्मीर की खुली अवज्ञा करने वाले उन सभी मामलों का विस्तृत विवरण पेश कर सकता हूँ जोकि वह श्रीनगर के नेशनल गार्ड्स की सहायता से कर रहा है। उसने यह समझ रखा है कि वह अपनी इच्छानुसार जो चाहे सो कर सकता है। आपका प्रत्युत्तर प्राप्त होते ही मैं शेख के पूरी तरह भ्रष्ट शासन और फासिस्टवादी कुशासन के कुछ महत्त्वपूर्ण उदाहरण आपको लिपिबद्ध करके भेज दूंगा।

आदर सहित,

आपका
(मेहरचन्द महाजन)

परिशिष्ट-५

आपरेशन टोपक

भारत-पाक सम्बन्धों के एक सैन्य विश्लेषण के अनुसार १९६५ में पाकिस्तान ने जम्मू-कश्मीर में व्यापक घुसपैठ कर भारत से जो युद्ध छेड़ा था, उसकी योजना पाकिस्तान के तत्कालीन विदेशमंत्री जुल्फिकार अली भुट्टो ने, 'आपरेशन जिब्राल्टर' नाम से बनायी थी। (नवभारत टाइम्स १७ जनवरी १९९०) वह पूर्णतः असफल रही। भुट्टो ने तब भारत से १००० वर्ष तक युद्ध लड़ने की इच्छा बतायी थी और फिर स्वयं राष्ट्रपति बनने पर भारतीय प्रधानमंत्री के साथ शिमला समझौता कर लिया। बीच के समय में एकाध योजना और बनी जिसे लागू नहीं किया जा सका। शत्रुता और प्रेमालाप की अनवरत आँखमिचौनी के इस खूनी खेल में वर्तमान कड़ी का नाम है 'आपरेशन टोपक', जो पूर्व सैनिक तानाशाह जिया उल हक ने तैयार की थी और जिसके कार्यान्वयन के सूत्र स्वयं सेना के हाथ में हैं और पूर्व-प्रधानमंत्री बेनज़ीर भुट्टो आन्तरिक राजनीतिक कारणों से उसका समर्थन करने के लिए विवश रही हैं।

'आपरेशन जिब्राल्टर' की तुलना में 'आपरेशन टोपक' इस अर्थ में भिन्न है कि जहाँ १९६५ में हिंसा और तोड़-फोड़ करने वाले सभी घुसपैठिये युद्ध-विराम रेखा से उस पार के पाकिस्तानी नागरिक थे, वहाँ इस बार कश्मीर घाटी में जन्मे या अन्य किसी रूप में जुड़े हुए भारतीय नवयुवकों को ही बरगलाकर अथवा भयादोहन करके देशद्रोहपूर्ण उपद्रवों में प्रयुक्त किया जा रहा है। साम-दाम-दण्ड-भेद की नीति से देशद्रोही तत्त्व इन युवकों को युद्ध-विराम रेखा के उस पार ले जाते हैं जहाँ विशेष रूप से स्थापित शिविरों में पाकिस्तानी सेना के विशेषज्ञ उन्हें विघटनात्मक कार्यों के लिए मानसिक रूप से तैयार करने के साथ-साथ घातक शस्त्र चलाने और तोड़फोड़ करने का प्रशिक्षण देते हैं। तत्पश्चात् उनको आग्नेयास्त्रों के साथ चुपके से भारतीय क्षेत्र में वापस घुसा दिया जाता है।

पत्रकार अल्ताफ गौहर के अनुसार कश्मीर को भारत से तोड़ने के लिए पाकिस्तान इस समय जिस लम्बी परोक्ष लड़ाई की नीति पर चल रहा है, वह वस्तुतः 'आपरेशन जिब्राल्टर' के समय चीनी प्रधानमंत्री चाऊ एन लाई द्वारा दिये गये परामर्श पर आधारित है। उस समय चाऊ के परामर्श की उपेक्षा करके पाकिस्तान को मुँह की खानी पड़ी थी।

अब नीति है कश्मीर के बेरोजगार असन्तुष्ट युवकों और अन्य कठमुल्ला तत्त्वों को छापामार युद्ध का प्रशिक्षण देकर उन्हें कश्मीर घाटी तथा जम्मू के मुस्लिम प्रभाव वाले क्षेत्रों में राजनीतिक जड़ें जमाने का अवसर देना और फिर उनसे रक्तपात करवाकर भारतीय सुरक्षा-बलों द्वारा की जाने वाली कार्यवाही के बारे में संसार भर में शोर मचाना।

परिशिष्ट ६

रा. स्व. संघ अखिल भारतीय प्रतिनिधि सभा, मार्च १९९०

प्रस्ताव—कश्मीर-समस्या

भारत के भूभाग जम्मू-कश्मीर पर बलात् अधिकार करने के पाकिस्तानी षड्यंत्रों से कौन देशभक्त परिचित व चिंतित नहीं होगा। उनके द्वारा भेजे गये मुजाहिदीन घाटी के मुसलमानों में वर्षों से मजहबी उन्माद भड़का रहे हैं और उन्हें भारत के विरुद्ध जिहाद करने के लिए शस्त्रास्त्र देते आ रहे हैं। किन्तु केन्द्र और राज्य की सरकारों ने उनको नियंत्रित करने का कभी प्रयास नहीं किया। उसी का परिणाम है कि आज काश्मीर घाटी में भारत-विरोधी शक्तियाँ देश को खुली चुनौती दे रही हैं। वे उन सभी सूत्रों को समाप्त करने पर तुली हुई हैं जो कश्मीर को भारत का अंग दर्शाते हैं। फिर चाहे वह चक्रांकित तिरंगा राष्ट्रध्वज हो या आकाशवाणी दूरदर्शन केन्द्र, स्टेट बैंक ऑफ इंडिया हो या भारत सरकार का कोई प्रतिष्ठान। भारतीय सेना की चौकियों पर भी, जिनके कारण पाकिस्तानी सेना भारतीय क्षेत्रों में पैर रखने का दुःसाहस नहीं कर पा रही है, उनके हमले बढ़ रहे हैं।

शत्रुपक्ष ने घाटी में रहने वाले हिन्दू समाज को अपने आक्रमण व अत्याचार का विशेष लक्ष्य बनाया है क्योंकि वे जानते हैं कि हिन्दुओं को उखाड़े बिना कश्मीर को भारत से अलग नहीं किया जा सकता। हिंदु नेताओं की हत्याओं और महिलाओं के शीलभंग की घटनाओं से हिन्दू समाज का मनोबल हिल गया है। वे अपना जीवन व सम्मान सभी कुछ संकट में पाते हैं। लगभग एक लाख हिन्दू घाटी छोड़ चुके हैं। उनका संरक्षण और पुनर्वास हमारी राष्ट्रीय जिम्मेदारी है। खेद का विषय है कि केन्द्र व राज्य की सरकारों ने उसका समुचित प्रबन्ध न करके अपने दायित्व की अब तक उपेक्षा की है। अ. भा. प्र. सभा का यह सुविचारित मत है कि यदि घाटी से हिन्दू निष्क्रमण रोका नहीं गया तो कश्मीर को भारत का अंग बनाये रखने में बाधाएँ बढ़ती ही जायेंगी।

इस सभा की यह मान्यता है कि बहुचर्चित क्षेत्रीय पिछड़ापन, बेरोजगारी अथवा राजनीतिक गतिरोध जैसी कोई समस्या आज की इस परिस्थिति का मूल कारण नहीं है। इस समस्या की जड़ में पाकिस्तानी षड्यंत्र और कश्मीरी मुसलमानों के एक बड़े वर्ग में भड़का मजहबी उन्माद और पृथकूतावाद है। राजनीतिक विशेषाधिकार और आर्थिक सुविधाओं का उपहार देकर, जैसा अब तक किया जाता रहा है, उसका सामना नहीं किया जा सकता है। तुष्टीकरण की नीति से समस्या हल नहीं हुई। उल्टे राष्ट्र-विरोधियों को प्रोत्साहन व शक्ति मिली है। यह सभा भारत सरकार को सावधान करती है कि जब तक पाकिस्तान का यह अघोषित युद्ध व पृथकूतावादी गतिविधियाँ जारी हैं और निष्क्रमित हिन्दू अपने क्षेत्र में पुनः वापस स्थापित नहीं हो जाते हैं, तब तक कश्मीर में किसी प्रकार की राजनीतिक प्रक्रिया प्रारम्भ करना देश-हित में नहीं होगा। अब समय गँवाये बिना इस चुनौती से युद्ध के ढंग से-लड़ना होगा। वही उसका एकमात्र समाधान है। राज्यपाल द्वारा इस दिशा में उठाये गये पग समर्थनीय हैं। भारत सरकार उनके मार्ग की अड़चनों को दूर करे और उनके हाथों को मजबूत करे। इस लड़ाई में जम्मू क्षेत्र की भूमिका का विशेष महत्त्व है। उसको सब प्रकार से पुष्ट रखना राष्ट्रीय दृष्टि से नितान्त आवश्यक है।

अ. भा. प्र. सभा देशवासियों और विशेष कर जम्मू-कश्मीर राज्य के निवासियों के मन से अनिश्चितता दूर करने के लिए यह आवश्यक मानती है कि भारत सरकार पाकिस्तान सहित सभी सम्बंधित देशों को स्पष्ट शब्दों में विदित करा दे कि हमारा देश जम्मू-कश्मीर राज्य के विलीनीकरण को पूर्ण और अन्तिम मानता है और जम्मू-कश्मीर के २/५ भाग पर पाकिस्तानी कब्जे को अवैध समझता है जिसके समाप्त होने पर कश्मीर समस्या स्वतः समाप्त हो जायेगी। इस सभा की यह मान्यता है कि जनमत संग्रह के नाम पर भारत के किसी भाग को पृथक् होने की छूट देने का विचार देश की अखण्डता व एकता के लिए अत्यन्त घातक है और राष्ट्रीय अस्मिता व स्वाभिमान के विरुद्ध भी। इसी प्रकार धारा ३७० को, जिसे संविधान में अल्पकालीन व्यवस्था के रूप में जोड़ा गया था, बनाये रखना राज्य के पूर्ण विलीनीकरण को नकारना है और पृथकूतावाद को कानूनी समर्थन देना है। उसको अविलम्ब समाप्त करना राष्ट्र की महती आवश्यकता है।

अ. भा. प्र. सभा भारत सरकार से मांग करती है कि –

(१) देश की सीमाओं को अभेद्य बनाने और शत्रुपक्ष को परास्त कर मातृभूमि को बचाने के लिए सेना को भी आवश्यक पग उठाने के पूर्ण अधिकार दिये जायें।

(२) सीमावर्ती क्षेत्र में सेवानिवृत्त सैनिकों को बसाया जाये और उनको व्यावसायिक और सुरक्षा सुविधाएँ दी जायें।

(३) घाटी से विस्थापित हुए हिन्दुओं को उनके क्षेत्र में वापस ले जाया जाये और उनकी क्षति-पूर्ति की व्यवस्था की जाये। उनको व्यावसायिक सुविधाओं के साथ सुरक्षा की गारंटी भी दी जाये और जब तक ये व्यवस्थाएँ संभव न हों, उन्हें पूर्ण आत्मीयता व सम्मान के साथ शिविरों में रखा जाये।

यह सभा समस्त देशवासियों से और विशेषकर संघ-कार्यकर्ताओं से आह्वान करती है कि घाटी से आये हिन्दुओं के पुनर्वास के लिए सभी आवश्यक पग उठायें और कश्मीर घाटी में पाकिस्तानी और पृथकूतावादी तत्त्वों को अलग-थलग कर उसे नियंत्रित करने में सदा की भाँति सरकार को पूर्ण-सहयोग करें।

परिशिष्ट-७

रा. स्व. संघ. अ. भा. का. मं. १९९०—हैदराबाद
प्रस्ताव—जम्मू-कश्मीर

यह उल्लेखनीय है कि मध्य एशिया व अरब क्षेत्र के कुछ गिनती के देशों को छोड़कर विश्व के लगभग सभी प्रमुख देशों ने कश्मीर समस्या के समाधान हेतु सुरक्षा परिषद् द्वारा ४० वर्ष पूर्व निर्धारित किये गये जनमत-संग्रह के उपाय को अब काल-बाह्य और अव्यावहारिक मान लिया है। उसके स्थान पर सब ओर शिमला समझौता के आधार पर अर्थात् परस्पर वार्ता के द्वारा समाधान निकालने की चर्चा चली है। और ऐसी वार्ता की पूर्वतैयारी के लिए भारत-पाकिस्तान की सचिव स्तर की बैठकें भी होने लगी हैं। किन्तु पाकिस्तानी नेतृत्व की यह सोच कि कश्मीर के बिना उनकी कल्पनाओं का पाकिस्तान पूरा नहीं होता, समस्या के समाधान में बाधक बनी हुई है।

यह समयोचित होगा कि भारत इन बैठकों के माध्यम से तथा अन्य उपयुक्त अवसरों पर पाकिस्तान को तथा कश्मीर समस्या में रुचि रखने वाले देशों को असंदिग्ध शब्दों में बताये कि भारत जम्मू-कश्मीर को अपना अविभाज्य अंग मानता है और उसके जिस २/५ भाग पर आक्रमणकारी पाकिस्तान ने बलात् अधिकार कर लिया है, उसके मुक्त हुए बिना तनाव दूर नहीं होगा। संसार का यह सर्वमान्य सिद्धान्त है कि आक्रमणकारियों को उनके आक्रमण का फल भोगने का अधिकार नहीं होना चाहिए। इसलिए समस्या का टिकाऊ समाधान यही है कि विश्व-जनमत पाकिस्तान को भारतीय भूभाग को खाली करने के लिए विवश करे।

किन्तु अखिल भारतीय कार्यकारी मंडल अनुभव करता है कि यदि विश्व की बड़ी शक्तियों ने पाकिस्तान को आधुनिकतम शस्त्रास्त्र से लैस न किया होता, और दिये गये शस्त्रों को जम्मू-कश्मीर व पंजाब के पृथकतावादी तत्त्वों के हाथों में जाने से रोका होता तथा पाकिस्तान को "इस्लामिक बम" बनाने की चेष्टा करने से विरत किया होता तो पाकिस्तान को भारत की प्रभुसत्ता को चुनौती देने का दुःसाहस नहीं होता और कश्मीर में पृथकतावाद व हिंसा इस सीमा तक कभी न भड़कती। भारत सरकार को इन तथ्यों के प्रकाश में अत्यंत सतर्क रहना होगा और राष्ट्र की अखण्डता की रक्षा हेतु आवश्यक दृढ़ता व दूरदर्शिता का परिचय देना होगा।

अ. भा. का. मं. भारत सरकार से आग्रह करता है कि वह विश्व को जता दे कि भारत अपनी मातृभूमि की एक भी इंच भूमि को लेन-देन का विषय नहीं मानता। समस्या-समाधान हेतु रखे जा रहे राज्य-विभाजन के प्रस्ताव को वह कभी स्वीकार नहीं कर सकता और बड़ी से बड़ी कीमत देकर भी संपूर्ण राज्य की रक्षा करेगा। वैसे भी संसार का व हमारा अनुभव यही बताता है कि देश-विभाजन से राष्ट्र की समस्याओं का समाधान नहीं होता।

अ. भा. का. मं. भारत सरकार से अपेक्षा करता है कि वह जम्मू-कश्मीर के संपूर्ण राज्य को आक्रमणकारी पाकिस्तान से मुक्त कराने और मातृभूमि की अखंडता की रक्षा के लिए सभी आवश्यक कदम उठायेगी। का. मं. भारत सरकार को आश्वस्त करता है कि संघ का एक-एक स्वयंसेवक राष्ट्र-रक्षा हेतु सरकार के सभी प्रयासों में सहयोग देने के लिए सदा तत्पर रहेगा। अ. भा. का. मं. को पूर्ण विश्वास है कि इस संकट का सामना करने के लिए देश के सभी नागरिक एकजुट होकर खड़े होंगे और आक्रमणकारी पाकिस्तान को सदा-सर्वदा के लिए शिक्षा देने में सफल होंगे।

शारदा पुस्तकालय
(संजीवनी शा. द. मं.)
क्रमांक [illegible]
५७८

सु प्र